R. S.

शाही पति परायण

रोचक मनोहर ऐतिहासिक नाविल

लेखक—
दातादयाल महर्षि शिवव्रतलाल वर्मन एम० ए०

सम्पादक—
नन्दूभाई
(निज़ामाबाद दकन)

प्रथमवार १०००

छापने का अधिकार स्वाधीन

मूल्य ।।।)

गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु गुरु देवोमहेश्वरः।
गुरु साक्षात् पर ब्रह्म तस्मै श्री गुरवेनमः ॥

शिव

वर्ष २ | मार्च १९५६ | तरंग १

❀ गुरु के चरणों में स्तुति और प्रार्थना ❀

गुरु एक अनादि अनन्त महा, पद कमल में आन के शरण गहा।
तू श्रेष्ठ है श्रेष्ठ बना मुझको, निज-भक्ति का पंथ दिखा मुझको॥
तेरा रूप है ज्ञान,तो ज्ञान मिले, तेरे चरण सरोज का ध्यान मिले।
अविनाशी है तू सुख राशी है, तू घट घट का गुरु बासी है॥
विश्व विश्वम्भर जगधारी, सुर नर मुनि सबका हितकारी।
मेरे मन से दूर मद मान रहे, मुझे सदा तेरा अभिमान रहे॥
सबके प्राणों का प्राण है तू, दे प्रेम जो प्रेम की खान है तू।
घट तिमिर मिटे कर उजियारी, तेरे चरण शरण की बलिहारी॥
राधास्वामी देवन के देवा, करूं हित से सदा तेरी सेवा।

सम्पादकीय—

सच्चे मालिक का गुण यह है कि वह अपने उपासना करने वाले के चित्त में शुभ भावना भरदे। और सच्चे गुरु की पहंचान यह है कि अपने शिष्य की दृष्टि बुराई की ओर से हटाकर भलाई की ओर लगाता चले।

धर्म का असली प्रयोजन भला बनाना, सुख दिलाना और अन्त में परमपद का अधिकारी ठहराना है। जहां इन बातों में कमी देखो समझलो कि वहां मालिक और गुरु का इष्ट मिथ्या, अपूर्ण और दोष युक्त है। जो बुराई, दोष और तर्क कुतर्क की ओर लगावे वह गुरु कैसा ?

यह संसार अति मनोहर, सुन्दर और पूर्ण है। क्यों कि यह सुन्दर अच्छे और पूर्ण मालिक की प्राकृतिक रचना है। हमने चूंकि बुरे, कुरूप और अपूर्ण भ्रमको चित्त दे रक्खा है इस कारण यह विपरीत रूप से दीख रहा है। भ्रम के दृष्टिकोण को बदल दो और यह भी और रंग रूप में भासने लगेगा।

यदि गुरु के सत्संग में आये हो तो अहिन्सा भाव की कमाई करो। फिर आनन्द ही आनन्द मिलेगा। जब तक तुम हिन्सक, दिल दुखाने वाले और अवगुणों पर दृष्टि रखने वाले रहोगे। न तुम सचाई को यथार्थ में समझ सकोगे और न स्वयं सच्चिदानन्द हो सकोगे। गुणग्राही दृष्टि बड़ी आनन्द दायक होती है। हजूर दाता दयाल ने बड़ी दया की कि ऐसी दृष्टि प्रदान की। गुण ग्राही दृष्टि गुरु की है। और अवगुण ग्राही दृष्टि संसार की है। जब गुणग्राही दृष्टि मिल जाती है तो फिर गुण ही गुणों का दृश्य चारों ओर दिखाई देने लगता है। जैसे विशेष रङ्ग के एनक के लगाने से आंखों को वही रङ्ग दीखता है।

जब तक मैं हुजूर दाता दयाल के चरणों में नहीं आया

मेरा स्वभाव दोष देखने का अधिक था और मैं दूसरों में वही दोष देखा करता था जो मुझमें पहले ही से मौजूद था। जिसमें दोष होता हैवही दूसरों को दोषी समझता है। और स्वयं दोषी होने के कारण ग़रीबों के अवगुणों पर परदा डालता रहता है, जिससे उसके दोषों पर परदा पड़ा रहे। जो व्यक्ति किसी के खास दोषों को प्रगट किया करता है वही दोष उसमें अधिक हुआ करते हैं। यह मैं अपने अनुभव से कहता हूँ। 'नेकी नेकरा, बदी बदरा'। 'आप भला तो जग भला आप बुरा तो जग बुरा'। अब दाता दयाल की दया से मेरा चित्त यदि पूर्ण रूप से नहीं बदला है तो बदलने अवश्य लग गया है। जब मैं किसी के दोष को देखता हूं तो इसके बदले कि; मैं उसको बुरा समझूं। चित्त की दृष्टि तत्काल अपनी ओर चली जाती है और उस पर दया करने लगता हूँ। और अपने मन में स्वयं लजाता हूँ, सकुचता हूं।

पहले यह मन काग था करता जीवन घात।
अब तो मन हँसा भया मोती चुन २ खात॥

किसी के दोषों को क्या देखते हो? और क्यों किसी का भंडा भोड़ कर दिल दुखाते हो। सोचो तुम में खुद दोष हैं या नहीं। यदि तुम में खुद दोष हैं तो फिर तुमको दूसरों के दोष दिखाने और प्रगट करने का अधिकार कहां है। "छाज बोले तो बोले, छलनी क्या बोले जिसमें बहत्तर छेद" यदि तुम अवगुण रहित हो तो फिर दोष-दृष्टि दोष पर क्यों पड़ने लगी। दोष रहित तो दोष को जानते भी नहीं। जिसके चित्तकी आखों पर दोष की एनक चढ़ी हुई है वही दोष देखता है। यदि तुम दोष और सदगुणों दोनों को देखने की दृष्टि रखते हो तो खुद इनसे खाली नहीं हो। गुरु का आदेश है कि दोष को त्यागो और गुण को ग्रहण करो।

जो जिसका साधन करता है वह उसी के अनुरूप बनता जाता है। क्योंकि उसके मन, बचन और कर्म में वही भाव भरा

रहता है। हकीम रोगी की सूरत देखते देखते रोग के चिन्ह आने जाने वालों के रङ्ग रूप में देखेगा। इन्जीनीयर की नजर हमेशा इमारत की खराबी, कमज़ोरी और टूटे फूटे पर पड़ेगी। वकील सदा अपने मवक्किल के मुक़द्दमे की कमी को ही बताता है। इसी प्रकार गुण ग्राही सदा गुण को देखते हैं। जहां कोई सामने आया उसके रोशन पहलू अथवा सद्गुणों पर उनकी दृष्टि पड़ती है और यह प्रसन्न होकर उसी को देखते हैं। सारी बात दिल पर मौकूफ़ है। यदि तुम गुरु के सच्चे भक्त हो तो मनुष्यों के शुभ भावों को देखो। अशुभ भावों की ओर से आंखों को मींच लो। इसी साधन और अभ्यास का कर्तव्य तुमको, नेक दिल, नेक ख्याल और शुद्ध अन्तःकरण वाला बनाता चलेगा।

लोग तो पाप की बुराई करते हैं मगर मैं पाप तक की महिमा का गुण गाया करता हूँ। मेरी दृष्टि में पाप का भी उज्ज्वल दृष्टि कोण है। और मैं तुमसे कहता हूँ ध्यान लगाकर इन बातों को सुनना। पाप ने चाहे औरों की हानि की हो पर उसने मेरा तो उपकार ही किया है। यदि मैं पापी न होता तो दातादयाल क्यों मेरे पास आते और क्यों तारने का यत्न करते। वह तो पतित उधारन और तरन तारन हैं। जब मैंने पाप किया और दुर्बल होकर दुखी हुआ तो हजूर दातादयाल स्वयं मेरे जैसों के उद्धार के हेतु विवश होकर इस संसार में प्रगट हुये। मैंने पाप किया और वह यहां पधारे। मेरे साथ २ औरों का भी कल्याण होगया।

धन्य धन्य गुरुदेव करी कृपा घनी।
मुझ पापी के तारने आये शरण धनी॥
पंथ चलाया संत का दे चरनन आशा।
दुखियों का दुख मेंट दिया आप दिलाशा॥
भाग सराहूँ आपना मैं हूँ बड़ भागी।
गुरु का दरशन पाइया हुआ परम बिरागी॥

प्रेम प्रीत की रीति को गुरु आन बताई।
भक्ति भाव दृढ़ाय कर हुये आप सहाई॥
राधास्वामी नाम की महिमा कह गाई।
भाग जगे पूरन मेरे हुई सच्ची भलाई॥

इसी पाप और पाप के ख्याल ने मुझको हजूर के चरणों में मस्तक झुकाने, चरन कमल की ओट गहने और चरन शरण की महिमा जानने की ओर विवश किया। न मैं पाप करता न यह दशा प्राप्त होती। भूखे के लिये रोटी और प्यासे के लिये पानी और रोगी ही के लिये औषधि है। जो भूखा नहीं है वह कैसे तृप्त किया जायगा। और जो प्यासा नहीं है वह क्या पानी पियेगा। जो रोगी नहीं है वह हकीम के पास क्यों जायगा। इन बातों को एक बालक भी समझ सकता है। चूँकि मैंने खुद पाप किया। मुझको पापियों के साथ सहानुभूति पैदा हुई। इन ग़रीबों को चाहे और कोई धिक्कारे, लानतान करे मगर मैं तो ऐसा नहीं कर सकता। अपनी बेबसी को देखकर मैं बेबसों के साथ सहानभूति के लिये विवश हूँ। अपनी बेकसी को जान कर मैं बेकसों का साथी बनने लगा हूँ। बलिहारी है इस पाप की। मेरे ही पाप ने दातादयाल को तरन तारन की उपाधि प्रदान की।

पहले पाप कमाय कर बांधी विष की पोट।
सकल पाप क्षण में गये जब आये गुरु की ओट॥
औगुन किये तो बहु किये, करत न लागी बार।
भावे बन्दा बख़शिये भावे गरदन मार॥
मैं अपराधी जन्म का नख सिख भरा विकार।
तुम दाता दुख भंजना मेरी करो संभार॥

मैं इसी प्रकार दुख को भी बुरा नहीं समझता। उसको बुरा क्यों कहूँ वह भी अच्छा ही है। तुम नहीं जानते मुझ पर कितना कष्ट था। दिल ही दिल में जला करता था। कहीं मेरा ठौर ठिकाना

नहीं था। बार २ अपघात करना चाहा। रेल पर कट कर मरने के इरादे से कईबार गया मुझको शास्त्रों के अध्ययनसे और ज्ञान ध्यान की पुस्तकों से शान्ति नहीं मिलती थी। क्योंकि निगुण था। यह धर्म पुस्तकें भी निगरों को अपना भेद नहीं देतीं हुजूर दाता दयाल के चरणों में शान्ति दीख पड़ी। हजूर ने अपघात करने से रक्षा की और उनके थोड़े दिन के सतसंग और उपासना से सच्ची खुशी प्राप्त हुई। हर की शरण मुझको दुख ने दिलाई इसी कारण में दुख की महिमा का गीत गाया करता हूँ। दुखदाई चिन्ताओं, भयानक उपद्रवों और कठोर कष्ट क्लेशों में रैन दिवस चुपचाप राधास्वामी नाम का स्मरण करता रहता हूँ। सन्ध्या समय खाट पर लेट गया और सुबह तक बराबर यह ही साधन और अभ्यास करता रहा। सुबह से नाम रटता रहा और इसी में शाम हो गई। बलिहारी है इस दुख की! जिसने हजूर का पल्ला पकड़ने का संकेत किया। अब गुरु का प्रदान किया हुआ नाम एड़ी से लेकर चोटी तक इस शरीर में व्याप रहा है। यह दुख की महिमा है।

सुख के माथे सिल पड़े जो नाम हिये से जाय।
बलिहारी वा दुक्ख की जो पल पल नाम रटाय॥

दुख न होता तो हजूर मुझको कैसे प्राप्त होते! कौन इस रहस्य को समझता है! किसको खबर है! दाता दयाल की दया से सुख नसीब हुआ। अब दुख सुख दोनों एक समान हो गये। अशान्ति जाती रही। शान्ति आगई। अब शान्ति और अशान्ति दोनों ही अलोप हो गईं द्वन्द मिट गया। निरद्वन्द की अवस्था है। तुम भी दुख से न घबराओ। मेरे समान रात दिन दाता दयाल का नाम जपा करो और फिर देखो क्या दशा होती है। इस साधन को किंचित् कर तो देखो। फिर कहना कि यह सत्य है या असत्य।

दुख से अधिक आरत बेकस व बेबस बनाने वाली कोई भी वस्तु नहीं है। आरत स्वारथ वाले को कहते हैं स्वार्थी सदा बावला

होता है। अपनी ही कहता है। औरों की नहीं सुनता। आरत पना भक्ति का पहला दर्जा है। बिना दुख के यह कभी प्राप्त नहीं होता। और न इसके बिना शरण दृढ़ की जाती है। दुख के लिये ही सुख हैं।

मालिक यदि मिला है तो केवल दुखियों ही को मिला है। सुखियों को न उसकी परवाह है और न उसको इनकी परवाह है। बिछोह के लिये मिलाप दूरी जानने वालों के लिये निकट और दुखियों के लिये शान्ति और सुख का सामान है। तुम मुझको याद करते हो। मैं भी तुमको याद करता हूँ सहानुभूति परस्पर की होती है। धन्य हैं दुखी! क्यों कि वह सुखी किये जायंगे।

सुखिया सब संसार है खावे और सोवे।
दुखिया दास कबीर है जागे और रोवे॥
जिन जिन पाया कन्त को तिन तिन पाया रोय।
हँसी खुशी जो पीउ मिलें तो कौन दुहागिन होय॥

लड़का रोता है तब माता की छाती में दूध उतरता है। तुम मालिक से दूर कैसे रह सकते हो। उसकी दया तुम्हारे ही वास्ते है। मांगो और दिया जायगा। खट खटाओ और तुम्हारे लिये द्वार खोला जायगा। इस बात का पूर्ण विश्वास रक्खो। सोच समझकर ध्यान करो। तुमको सचाई मिलेगी।

हर वस्तु के भले और बुरे दृष्टिकोण होते हैं। जिसको जिस बात से रुचि होती है वह उसको ही चित्त देता है। जिसने गुरु के चरण गह लिये हैं उसको भले दृष्टिकोण से ही दृढ़ विश्वास रखकर चलना चाहिये। गुण सब में हैं। कोई गुण रहित नहीं है। क्योंकि यह जगत स्वयं गुणों से बना है। यह त्रिगुणात्मक है। जो वस्तु जिससे बनी होती है वह उसमें हर समय व्यापक होती है। कारण सदा अपने कारज में रहता है। गुण के अर्थ संस्कृत में राय देने के हैं। राय या सलाह सदा मनुष्य की रुचि के अनकूल हुआ

करती है। जिसने जैसी दृष्टि बनाली है वह वैसे ही देखता है और उसी के अनुकूल सम्मति देता है। राय देता है।

हम जिस व्यक्ति में गुण देखते हैं, दूसरा मनुष्य उसी में औगुण देखता है। वह हमारे समान गुण क्यों नहीं देखता। उसने और तरह के भ्रम को चित्त दे रखा है। केवल यह अन्तर है। जब जगत स्वयं गुण से बना तो फिर जगत की कोई वस्तु गुण रहित कैसे हो सकेगी। हां दृष्टि के दोष से वह न दीख पड़े तो दूसरी बात है। इसी कारण बार बार कहा जाता है कि आत्मा के साधन में पहले दृष्टि को गुण ग्राही बना ले चलो। (नफी) और नास्तिक भावों को चित्त न दो। बल्कि (असबात) और आस्तिक भावों को चित्त दो। नास्तिकता में उन्नति नहीं है। उन्नति तो आस्तिपने में है। इस कारण प्रथम नास्तिकता के भावों को दिल से निकाल दो। फिर आस्तिक भावों को चित्त दो। नफी (नास्तिक) को योग में यम (ख़ारिज करना) कहते हैं। और (असबात) आस्तिक भावों को क़बूल करने को नियम कहते हैं। सार को गहो तब बात समझ में आवेगी। गाय का बछड़ा खून को छोड़ देता है और दूध ले लेता है! इसलिये तुम सार का दूध गाय रूपी शिक्षा से ले लो और शब्दों के सिलसिले में जो कुतर्क रूपी खून है उसको त्याग दो। इस तरह तुम्हारा व्यवहार सारे जगत के प्राणियों के साथ, मत मतान्तरों के साथ और श्रुति स्मृति के साथ हो। तब तुम यथार्थ में गुरु के पंथ में दाख़िल और शामिल समझे जाओगे। वरन् सार तत्व को न जानकर आपा पन्थी बन जाओगे। जिससे बुराई फैलेगी।

गुण ग्राही होना गुरुमत में शामिल होना है। हजूर दाता दयाल ने धाम में रहने के समय बचन फ़रमाये थे! तुम शहद की मक्खी के समान फूलों पर बैठने और उनका आवश्यक रस लेने का साधन सीखो। पर फूलों पर ऐसे बैठो कि उन पर तुम्हारे पांव

के धब्बे तक का निशान न होने पाये। यह सूक्ष्म प्रकृति वालों और सदाचारियों का गुण है। दूसरी तरह की मक्खियों के स्वभाव के न बनो। वह तो जब बैठेगी मैले ही पर बैठेंगी। वह शहद की मक्खी नहीं है। उनका स्वभाव यह है पहले तो मैले पर बैठकर उसका असर लेंगी फिर मनुष्यों के खानों पर बैठकर उसको अपवित्र और बुरा कर देंगी। यह स्वभाव सेवक, दास और गुरु-मुख को शोभा नहीं देता। वही बात मैं तुमको भी बताता हूँ। खूब सोच विचार कर इसकी ओर ध्यान दो। ताकि जीते जी तुमको परमार्थ का आनन्द मिल जाय और फिर उसका अभ्यास करते हुये सन्तों के अन्तिम पद का उत्तराधिकार सहज में ही प्राप्त करलो।

संतमत प्रेम का मार्ग है। उसके अनुयाई को किसी की भी बुराई करने की आज्ञा नहीं है। यहां तो केवल प्रेम को दृढ़ करना है। तुम नेक बनो, नेकी से सम्बन्ध रक्खो। तुम्हारी नेकी का प्रभाव लोगों पर मनोहर प्रभाव पैदा करे और वह तुम जैसे हो जांय। हमको तो सेवा करनी उचित है, सेवक को दोष देखने से क्या काम है।

सेवक सेवा में रहे सेव करे दिन रात।
कह कबीर कुसेव का सनमुख ना ठहरात॥

सेवकों में सबसे अधम—
नन्दू भाई

व्यवस्थापक का नम्र निवेदन !

१—दाता दयाल महर्षि शिवव्रतलाल जी महाराज का जन्म दिवस हर साल की भांति तारीख १० व ११ मार्च सन् १९५६ शनिवार व रविवार को दयालधाम पोस्ट दयाल नगर ज़िला अलीगढ़ में मनाया जावेगा—सविनय प्रार्थना है कि सतसङ्गी भाई बहिन सपरिवार पधार कर उत्सव की शोभा को बढ़ावें। भोजन का प्रबन्ध धाम की तरफ से रहेगा। केवल ओढ़ने बिछाने का प्रबन्ध साथ में लावें। परम दयाल पं० फ़क़ीरचन्द जी महाराज होशियारपुर से पधारेंगे। व पं० बूआदत्ता जी महाराज उर्फ पीरे-मुग़ां साहब दहली से पधारेंगे। सतसङ्गी भाइयों से निवेदन है कि उनके अमृत रूपी बचनों को सतसङ्ग में सुनकर लाभ उठावें।

२—व्यवस्थापक के रिक्शा से गिरकर टांग में सख्त चोट आई है। जिसके कारण आज एक हफ़्ते से चल फिर नहीं सका। १०, १५ रोज ठीक होने में और भी समय लगेगा। इस कारण पत्रोत्तर देने व दवा भेजने में बिलम्ब हो रहा है। आशा है क्षमा प्रदान करेंगे।

३—जिन सज्जनों ने केवल ६) चंदा शिव वर्ष दूसरे के भेजे हैं और दवा महाशक्ति चाहते हैं वे कृपा करके ।।) की टिकिट लिफ़ाफे में रखकर ख़र्च रजिस्ट्री व लिफ़ाफ़ा दवा के लिए और भेज दें इसको पहिले भी लिखा जा चुका है।

भवदीय—
लल्ला भईया
मैनेजर शिव
पो० दयाल नगर (अलीगढ़)

विषय-सूची

लेख		पृष्ठ
१-सम्पादकीय		❀
२-व्यवस्थापक का नम्र निवेदन	....	9
३-अन्तरङ्ग पृष्ठ	....	10
४-विषय-सूची	....	१
५-प्रार्थना	....	❀
६-भूमिका	....	३
७-प्रथम अध्याय (प्रेम मुहब्बत)	....	८
८-दूसरा अध्याय (हुस्न सौन्दर्य)	....	१३
९-तीसरा अध्याय (असलियत परिचय)	....	१६
१०-चौथा अध्याय (क़िस्मत भाग्य)	....	२७
११-पांचवां अध्याय (मशवरा)	....	३४
१२-छटा अध्याय (स्त्री)	....	४२
१३-सातवां अध्याय (पद्मिनी)	....	४६
१४-आठवां अध्याय (प्रयत्न कोशिश)	....	५५
१५-नवां अध्याय (टालमटोल)	....	६२
१६-दशम अध्याय (शादी)	....	७०
१७-ग्यारहवां अध्याय (पश्चाताप)	....	७७
१८-बारहवां अध्याय (निराशा)	....	८५
१९-तेरहवां अध्याय (आश्चर्य)	....	८७
२०-चौदहवां अध्याय (हसरत अथवा पश्चाताप)	....	९७
२१-पन्द्रहवां अध्याय (धावा हमला)	....	१०५
२२-सोलहवां अध्याय (सत अथवा असमत)	....	११३
२३-सत्रहवां अध्याय (शान इलाही)	....	११६
२४-अठारवां अध्याय (जनून अथवा बेसुधी बावरपन)		१२२
२५-उन्नीसवां अध्याय (इश्क़ सादिक़)	....	१२५
२६-बीसवां अध्याय (अन्तिम परिणाम)	....	१३०

—भूमिका—

प्रिय पाठको ! पढ़ो !! पढ़ो !!! पढ़ो !!!! मेरे उद्‌गारों को बुरी भली भाँति से पढ़ो। शौक से पढ़ो,बिना शौक से पढ़ो, प्रेम से पढ़ो, प्यार से पढ़ो, हित से पढ़ो, चित से पढ़ो, राग से पढ़ो, द्वेष से पढ़ो, साधारण रूप में पढ़ो, आत्मिक आनन्द प्राप्त करने के अभिप्राय से पढ़ो, प्रेम व प्यार के मानसिक दृष्यों को दिव्य दृष्टि से देखने की लालसा से पढ़ो, विचित्र रहस्य जताने वाले भाव के आधीन होकर पढ़ो, सत्य के साक्षात्कार करने की इच्छा से पढ़ो मगर पढ़ो अवश्य। यदि मुझमें लेश मात्र भी सत्य है तो तुम उसके अधिकारी बन जाओगे। यदि मुझ में सत्पुरुष दाता दयाल का सच्चा प्रेम है तो तुम भी उसके सच्चे प्रेमी बन जाओगे। मेरे भाव, मेरे विचार, मेरे अनुभव, मेरी मानसिक फुरनायें, मेरी सिद्धि, मेरी शक्ति तुम्हारे रोम रोम में अंग २ में प्रवेश करती जायेंगी और तुम मुझ जैसे बन जाओगे। और अपने मन में, चित में, शरीर में और आत्मा में उन सब भावों का साधन और अभ्यास करते हुये अनुभव करोगे। यह मेरे जीवन के मुख्य अंग बन गये हैं। मैं बुरा मनुष्य नहीं हूं क्योंकि बुराई मेरा इष्ट नहीं है। क्योंकि अविश्वास, नास्तिक भावों से मुझे कोई सम्बन्ध नहीं है। मैं संसार में ऐती अथवा आस्तिक स्वभाव का उत्तराधिकारी बन कर आया हूँ और मिथ्या भ्रम और माया–मोह से मुक्ति कराने आया हूँ।

गुसाईं तुलसीदास जी रामायण की भूमिका में एक जगह राम नाम के महत्व को इस प्रकार दर्शाते हैं:—

भाव कुभाव अनख आलस हू। नाम जपत मंगल दस दिस हू।

अर्थः—चाहे भाव सहित, चाहे बिना भाव के, क्रोध में,

चाहे सुस्ती से तनिक राम नाम के सुमिरण को अपनी जिह्वा का साधन तो बनालो। फिर देखो ! राम नाम कहते ही तुम्हारी दसौ दिशा में आनन्द मंगल और खुशी की वर्षा होने लगेगी।

हर वस्तु प्रकृति में अपना प्रभाव रखती है। प्रभाव से खाली कोई वस्तु नहीं है। राग, द्वेष, उदासीनता, आलस्य सब अपना प्रभाव रखते हैं। यदि भूलकर भी थोड़े समय को अग्नि, वायु, जल और प्रकृति के किसी महाभूत की उपासना कर देखो अथवा उसके पास या समीप बैठ देखो फिर स्वयं ही तुम में गरमी सरदी और उसके प्रभाव आने लगेंगे। यह सचाई है। यथार्थ है। यह प्रकृति का अटल नियम है। फिर कैसे सम्भव है कि यदि सब में प्रभाव है तो मालिक का नाम प्रभाव से खाली होगा ? किंचित सतसंग का सुख भोगो तो सही फिर स्वयं इस यथार्थ ज्ञान के इस महावाक्य के इस अनुभव के अभिमानी हो जाओगे।

मैं न बिना भाव के पढ़ता हूँ न बिना किसी प्रयोजन के लिखता हूँ। मेरा लिखना पढ़ना निःप्रयोजन नहीं है। बिना स्वार्थ या प्रयोजन के मैं कोई काम नहीं करता और यह सम्भव नहीं है कि इस स्वारथ के परिणाम से मेरे पाठक कभी वंचित रह सकें। मेरा स्वारथ या प्रयोजन क्या है ? वह यह है कि मैं अपने पाठकों को दिव्य दृष्टि, उदार चित, साहसी और दूर-दर्शी देखूं। प्रथम मैं स्वयं अपनी मानसिक दृष्टि से इन दिव्य दृष्यों को देख लेता हूँ, फिर औरों को इनके दिखाने का आग्रह करता हूं। बिना देखे हुये मैं दूसरों को नहीं दिखाता। बिना सुने हुये दूसरों को नहीं सुनाता। पहले मैं स्वयं उनका आनन्द भोग लेता हूं तब दूसरों से उसके आनन्द भोगने की इच्छा करता हूँ। सम्भव है प्रारम्भ में उनकी यह दृष्टि न हो। यह भी सम्भव है कि प्रारम्भ में उनको मेरे भाव व विचारों के साथ सहानुभूति भी न

हो, पर मैं इसकी ओर से उदासीन रहता हूँ। मैं प्राकृतिक नियम को जानता हूं और जान बूझ कर अपने मानसिक विचार के आधीन आपको अपने सतसंग, सहानुभूति और सहयोग के लिये बुलाता हूं प्रारम्भ में विरोधी भाव व विचारों को टक्कर का भय जरूर रहता है। मगर मेरे स्वाभाविक गुण, समदर्शी प्रभाव, सहानुभूति और सुहृद भावनाओं की लालसा, शनैः शनैः विरोध को दूर करता हुआ उनको सम दृष्टि और स्थिर चित होने का सौभाग्य प्रदान करता जायगा और थोड़े ही समय में वह मुझ जैसे सहानभूति रखने वाले के उत्तराधिकारी बन जांयगे। जिस प्रकार मैं उनके मेल मिलाप से खुश होता हूँ वह भी मेरे साथ मिलने से प्रसन्न हो जायंगे।

इसकी आवश्यकता नहीं है कि कोई व्यक्ति व्यर्थ में अपना समय नष्ट करके मेरे पास आवे। शरीर के सम्बन्ध तुच्छ और अनित्य होते हैं। भाव व विचारों का सम्बन्ध अनन्त और चिरकाल तक रहने वाला दृढ़ होता है और फिर आत्मिक सम्बन्ध तो अनादि, अनन्त, और विशेष रूप में स्थायी होते हैं। शरीर को देश और काल पर विजय प्राप्त नहीं होती। भाव और विचार दम के दम में देश और काल के चक्र पर सहज में विजय प्राप्त कर लेते हैं और आत्मा में तो देश और काल की सम्भावना ही नहीं है। सैकड़ों कोस रहते हुए मनुष्य २ के संग का आनन्द भोग सकता है। हाल के जीवन के परम सुख को प्राप्त करके मनुष्य प्राचीन समय के शारीरिक व्यक्तियों के साथ प्रेम का अवकाश पा सकता है, उनसे वार्तालाप कर सकता है। मगर इस भेद के जानने या अनुभव करने की आवश्यकता जरूरी है। कबीर साहब की वाणी है:—

लाख कोस जो गुरु बसै दीजै सुरत पठाय।
शब्द तुरी असवार होइ छण आवै छण जाय॥

जो गुरु बसै बनारसी, शिष्य समंदर तीर।
एक पलक बिसरे नहीं, जो गुण होय शरीर॥

परन्तु यह नितांत आत्मिक विषय है। जिसका ज्ञान बहुत कम लोगों को है। फिर भी जो काम इस प्रकार होता है, वही कुछ अंश में पुस्तकों द्वारा भी किया जा सकता है।

आजकल लोग आत्मिक विषय से अनभिज्ञ होने के कारण केवल सभ्यता और शिष्टाचार के नाविलों को चाव से पढ़ते हैं। बड़ी अच्छी बात है! मैं भी उसी घाटपर उतर कर तुमको सभ्यता और शिष्टाचार की शैली में आत्मिक आनन्द प्राप्त कराने का परिश्रम करता हूँ। उस तरह न सही तो इसी तरह सही। जो तुम्हारी राय वही मेरी भी राय। जो सेवा जिस प्रकार तुमको रुचे वही सेवा मैं भी करना अपना इष्ट समझता हूँ। और यह नाविल आपकी भेंट करता हूं।

यह इतिहास नया नहीं है। पुराना है। कल्पित नहीं है बल्कि यथार्थ है। असली है। गुजरात वासियों के कान इससे परिचित हैं। मैं भी पहिले दो बार पन्नों में इस कहानी को सुना चुका हूं। पर यह जरूरत से अधिक संक्षेप में थी, थोड़ी थी। इस बार उसे कुछ विस्तार के साथ वर्णन करता हूँ जिससे उसका यथार्थ ज्ञान प्राप्त हो और जिस तरह मानवी भाव व विचार प्रेम और रूप लावण्य के भावों के प्रभाव में आकर एक बिशेष प्रकार का रंग रूप धारण कर लेते हैं उस दशा से भी लोग परिचित हो जांय इस में अध्यात्म चिन्तन के भी रहस्य कहीं कहीं आये हैं। जो पाठक जनों को अवकाश पड़ने पर, गुप्त भेदों, सार वस्तु के रहस्यों का संकेत देंगे। ज्ञान प्राप्त करायेंगे। संसारी और परमार्थी वासनाओं में बहुत कुछ समता होती है। भेद नहीं होता। यदि संसारी अथवा विषय वासना में सचाई है, दृढ़ता है, तो वह ही यथार्थ प्रेम का अङ्ग बन जाता है, रूप धारण कर लेता है।

बिना संसारी उदाहरण दिये सच्चे प्रेम, अन्तरी भावों का विषय लोगों की समझ में नहीं आता। विवश हो कर उदाहरण देने पड़ते हैं। अतः इस इतिहास के सुनने का अभिप्राय यह ही है।

अन्तिम विवेचनाः—चूँकि मैं आजकल ऐसे अध्यात्म विषय के क़िस्से केवल भाई सदा कुंवर मकान दीवान गनेशीलाल सा० पेन्शनर नया बाज़ार फ़ेज़म के मनोरंजन और लाभ के हेत लिख रहा हूँ जिससे उनके मन में हुज़ूर दातादयाल का प्रेम मालिक की भक्ति और भक्ति भाव का प्रभाव पैदा हो। नाविल शाही भिखारी और शाही डाकू आदि इन्हीं के ख्याल से लिखे गये हैं। स्त्रियों की स्वाभाविक ही क़िस्से कहानियों में अधिक रुचि होती है।

—शिवव्रतलाल

शाही पति परायण

प्रथम अध्याय

प्रेम (मुहब्बत)

"यक दाना मुहब्बत है बाक़ी खश व खाशाक"

तुम जानते हो कि प्रेम क्या चीज़ है ? किसी पुरुष का स्त्री से सम्बन्ध है। किसी स्त्री को किसी पुरुष से प्यार है। दो मनुष्य आपस में एक दूसरे को प्यार करते हैं। दो स्त्रियां एक दूसरी से स्नेह रखती हैं। तुम उत्तर दोगे कि यह प्रेम है। हां ! इस भाव को प्रेम के पुनीत नाम से पुकारने में इतना हर्ज नहीं है। क्योंकि किसी किसी अवस्था में मन के यह भाव दृढ़ होकर प्रेम के रूप में साधन करके पूर्ण हो जाते हैं। पर यह दशा सौ में से कठिनाई से किसी एक की होती होगी। वरन् यह सम्बन्ध बहुधा शारीरिक और इन्द्रिय विषय वासना में फंसकर कुछ दिनों के बाद नितान्त लोप हो जाते हैं। इस कारण इन सब को प्रेम कहना मिथ्या ठहरेगा। संसार अपने स्वारथ के कारण एक दूसरे की सहानुभूति का दम भरता है। एक का काम दूसरे से निकलता है। इसलिये जीवन के व्यवहार में शारीरिक और इन्द्रिय-विषय वासना के सम्बन्ध में एक दूसरे से मेल मिलाप हुआ ही करता है। इसमें कोई नई निराली बात नहीं है। प्रेम इन सब से कोई विचित्र वस्तु है।

प्रेम आप अपना आदि और आप अपना अन्त है प्रेम उच्च कोटि का एक भाव है जो कभी किसी २ एक मनुष्य के पवित्र मन में बस कर उसके चारों ओर पवित्रता के भावों को बखेर देता है। प्रेमी तो मन के शुद्ध हो ही जाते हैं। बल्कि दूसरे भी जो उनके परम पुनीत चरित्रों को देखते हैं वे भी उसके प्रभाव में आये बिना नहीं रहते। जिस समय किसी को सौभाग्य से कहीं

भी प्रेम के सुन्दर और मनोहर दृष्यों के देखने का सुअवसर मिल जाता है उसका जीवन उसी क्षण ही ऐसा परिणित शील हो जाता है कि मनुष्य की बुद्धि देखकर चकित रह जाती है और देखने वाले का मन ऐसा प्रभावित हो जाता है कि वह उसके परम पुनीत और पवित्र प्रभाव को अपने हृदय और मस्तिष्क में बसा हुआ प्रतीत करता है।

प्रेम इस लोक की वस्तु नहीं है। परलोक का विषय है। जिन दो दिलों को एक दूसरे पर निछावर होते हुये देखो तो समझ लो कि यह परलोक के प्रभावों को लेकर पृथ्वी पर साक्षात दया की वृष्टि के रूप में प्रगट हुए हैं जिससे दीन दुखी जीवों के व्याकुल चित्त को सुख और शान्ति का जल शीतल कर सके। सूखा हुआ सरोवर एक दम पानी से भर जाता है। सूखी हुई कमल की जड़ को तरावट मिल जाती है। उसमें अँखुये फूट निकलते हैं। हरे २ चौड़े २ पत्ते जल के ऊपर छा जाते हैं और जल के नीले रङ्ग के ऊपर हरी चादर छा जाती है। और फिर उस पर सुन्दर नीले रंग की कलियां निकल २ कर न केवल जल पर बिछे हुये हरे पत्तों की शोभा को बढ़ाती हैं बल्कि यह प्रतीत होता है कि सौन्दर्य की मनोहर सृष्टि पाताल से उमड़ कर ऊपर खुल खेलने को आई हुई है। फिर यह कलियाँ चटखती हैं जिससे यह प्रगट होता है कि उस सृष्टि ने प्रसन्न होकर अपने रंगीन होंठों को खोला है। और कमल के फूल के भीतर के सफेद जीरे चमकीले और आबदार मोती के दाँतों के समान अपनी शुद्ध पवित्र और विचित्र छवि को अनुपम मुसकराहट की छटा को दरशा रहे हैं। फूल खिले। भौंरे और शहद की मक्खियां भिन भिनाती हुई उनके चारों ओर मंडला कर, हज़ार जान से मुग्ध होकर, न मालूम कहाँ से छा जाते हैं। और फिर कमल के फूलों की मुस्कराहट की छवि जिन की दृष्टि में आती हो उनको भी एक विशेष

प्रकार की, असाधारण और सूक्ष्म प्रसन्नता प्राप्त होती है। जिसके उदाहरण तक का चिन्ह शारीरिक और इन्द्रिय वासना के मन्डल में दृष्टि गोचर नहीं होता।

यह एक मनोहर और विचित्र दृष्य है जो हमको हर देश, हर काल और हर वस्तु में प्रतीत होता है। प्रेम को कोई कभी छिपा नहीं सकता। हजार कोई छिपाये। पर यह वह वस्तु है जो घट के पट में रहना कभी स्वीकार नहीं करती। कबीर सा० की वाणी है–

प्रेम छिपाया ना छिपे जा घट परगट होय।
जो मुख ते बोले नहीं नयन देत हैं रोय॥

दया की वृष्टि का जल तो ऊपर के लोक से आता है। यहां जिस समय दो प्रेम करने वालों की आँखें मिलीं उनके दिव्य चक्षुओं से प्रेम के आंसू उमड़ने लगते हैं। स्वांति का जल तो देर में मोती बनता होगा। पर नेत्रों की अश्रुधारा का जल शोभायमान मोती की लड़ियों के रूप में बाहर बहने लगता है। मन की चंचलता और विकलता पल क्षण में भंग हो जाती है। एड़ी से लेकर चोटी तक तरावट आजाती है। और जिस प्रकार दूध और मीठा मिल कर एक होजाता है उसी प्रकार यह प्रेम का लसदार जल दो भिन्न स्वभाव वालों को इस समान जोड़ देता है। चिपटा देता है कि फिर उनका पृथक करना एक कठिन समस्या हो जाती है। प्रेम में सत है, प्रेम में छल कपट नही है। प्रेम में दिखावा और बनावट नहीं होती। दो दिल इसके प्रभाव में आकर ऐसे गुथ जाते हैं कि फिर कोई निर्णय नहीं कर सकता कि कौन प्रेमी है। और कौन प्रिया। कौन प्रीतम है और कौन प्रेमिका। द्वैत भाव सदा के लिए उड़ जाता है। और प्रेमी और प्रिया अथवा आशिक़ और माशूक़ दोनों मिलकर एक हो जाते हैं।

मैं तन हूँ गर तू जान है, मैं जान हूं गर तू तन मेरा।
तू मुझ पै दिल से है फ़िदा, मैं हूं फ़िदा दिल से तेरा॥

दो जिस्म में एक जान है, दोनों का एक अरमान है।
यह इश्क़ का सामान है क्या समझे कोई तीसरा॥

जिस समय मन इस प्रकार किसी पर मुग्ध हो जाता है, आसक्त हो जाता है फिर उसकी किसी प्रकार की तपस्या पूजा और सेवा की आवश्यकता नहीं रहती। रोज़ा, नुमाज़ पाठ पूजा सब बेकार हो जाते हैं। ज्ञानियों से कहो वह ज्ञान को पोथियों के शब्दों पंक्तियों और वरणों से अपनी आंखों को रिगड़ा करें! सार तत्व और सच्चा अद्वैत पद केवल प्रेम में है। और सच्चा प्रेमी यथार्थ में साक्षात अद्वैत वादी और सार ग्राही ही नहीं बल्कि साक्षात सार रूप ही हो जाता है। ध्यान करने वाले योगियों को तपस्या के दुख सुख भोगने दो। उनको अब तक चेत भी नहीं हुआ कि यथार्थ सार ज्ञान अथवा चित की व्रतियों का निरोध केवल प्रेम है और जो बात उनको वर्षों के अभ्यास से नसीब होती वह यहाँ केवल एक मधु भरी अथवा प्रेम भरी चितवन के अंतः करण में भेद न करने से, दया पात्र बन जाने से तत्काल प्रदान हो जाती है। यह ही सच्चा मिलाप है, सच्चा योग है, यह ही सब कुछ है साक्षातकार है, यह ही इष्ट सिद्धि है, यह सच्चा चित की वृतियों का निरोध है, इष्ट है, भजन बन्दगी का निचोड़ है, सार तत्व है। एक सूफी का कलाम कैसा विचित्र है:—

"इश्क़ की आतिश को दिल में ले जला।
छोड़ फ़िकरे ज़हद व ताइत बरमला॥"

अर्थात् प्रेम की अग्नि को दिल में जलाले। पाठ पूजा रोज़ा नुमाज़ की चिंता का नितान्त त्याग कर दे।

यदि हम में से किसी को इस प्रकार के साक्षत प्रेम का दृष्य संसार में दीख पड़े तो समझ लो कि वह परलोक का है, लोक का नहीं। सृष्टि की रचना में प्रमाण क्षण-भंगुर अर्थात् क्षण प्रतिक्षण बदलते रहते हैं। अनित्य होते हैं। पर उपरोक्त कथन में नाम के लिए भी परिवर्तन नहीं है।

शिकारी रूपी प्रेम जिस वृक्ष पर आकर अपना घोंसला बना लेता है फिर क्या मजाल है कि लोभ और मोह के पक्षी अपने घोंसले रखने का साहस कर सकें अथवा प्रेम रूपी सिंह जिस बन या कछार में आकर बिफरने लगता है। अहंकार के हाथी, लोभ के हिरन, छली छपटी भेड़िये अपनी अपनी म्याद को छोड़ कर भाग जाते हैं। इसके समीप आने की बात तो दूर रही उनको इतना साहस भी नहीं होता कि उसके ठिकाने के निकट दो चार घड़ी भी ठहर सकें।

प्रेम में छुटाई बड़ाई नहीं होती। न इसके यहां कोई नींच ऊँच है। यह जब मिलेगा सम भाव अथवा समदृष्टि से मिलेगा। समानता से मिलेगा और सब निरख परखों को भेदों को जो वास्तव में कल्पित, भ्रमात्मक, और अनस्थिर हैं दम के दम में नाश कर देगा।

प्रेम में कष्ट भी सुख रूप है। प्रेम का कांटे कटीलों का मार्ग भी निर्मल और स्वच्छ पवित्र सड़क है जिस पर गुलाब की पंखड़ियों की सेज बिछी रहती है।

प्रेम मूक है अवाक है। इसमें होट खोलने की मनाई है। यह क्या वस्तु है ? कोई क्या बतावे ? इस गुत्थी, इस पहेली या ताले की कुंजी किसी सच्चे ईश्वर भक्त ही को प्रदान होती है। दूसरों को इसका क्या ज्ञान है।

इश्क़ क्या शै है किसी कामिल से पूछा चाहिये।
किस तरह जाता है दिल बेदिल से पूछा चाहिये॥

यह प्रेम किस प्रकार मनुष्य के मन में प्रगट होता है इसकी व्याख्या की एक सूरत दीदार है, परिचय है मिलाप है, दूसरी वार्तालाप है। तीसरी भाव व विचार है, ख्याल है। इत्यादि २ हम किसी को देख कर उसकी मनोहरता के महत्व को आंख की राह से अपने दिल में उतार लेते हैं। और रात दिन उसके

स्मरण में लवलीन रहते हैं। यह प्रथम अंग है। हम किसी के सौन्दर्य का हाल सुनकर उसके रूप और लावण्य को कान के रास्ते मन में धारण करके उसके ध्यान में मुग्ध मस्त और लीन रहते हैं। यह दूसरा अंग है। हम किसी की पवित्रता, सभ्यता और सदाचार की अवस्था के भ्रम को अपने मन में बसा कर उसी के रात दिन परिपक्व करने की चिंता में व्यस्त रहते हैं। लगन लगाये रहते हैं। यह तीसरा अङ्ग है। इत्यादि २

दूसरा अध्याय

हुस्न (सौन्दर्य)

"हुस्न, हुस्ने आफ़ीं का जलवा है।" अर्थात सौन्दर्य परम पुरुष के रूप का चमत्कार है।

राखंगार जूनागढ़ का राजा था। जो उस समय सोरठ देश की राजधानी था यहाँ इसी इलाके में गिरनार पर्वत शोभायमान है। जो प्राचीन समय में साधू योगी यती और नाथों का स्थान बना हुआ था। उस देश में गिरनार की वह ही महिमा थी जो उत्तरी भारत में हिमालय या विन्ध्याचल की है गिरनार वैसे तो एक मुख्य पर्वत का अङ्ग न कहा जाय क्योंकि वह वास्तव में विन्ध्याचल का एक भाग है मगर प्राचीन समय में वह एक विशेष प्रकार के महत्व का पुनीत पर्वत समझा जाता था। चाहे आज कल वहां एक मुसलमान नवाब का राज्य है पर अब भी उसमें स्थान २ सुन्दर मन्दिर बने हुये हैं। कहीं कहीं पर्वत के निचले भाग में गुफायें भी मिलती हैं जो योग के अभ्यासियों की यादगारें बनी हैं। हिन्दू उसको तीर्थ समझते थे। जैनी भी उसे विशेष श्रद्धा की दृष्टि से स्वाभाविक ही देखते थे। बौद्धों के वहां आदि में बहुत मठ थे। वह जैसा पहले था अब भी क़रीब २ वैसा ही है। उसकी मान प्रतिष्ठा को

काल के भयानक चक्र ने कोई हानि नहीं पहुँचाई यह सत्य है कि अब वहां बौद्धों का नाम निशान बाक़ी नहीं रहा, पर हिन्दू और जैनी अब भी वहां हर साल हज़ारों और लाखों की तादाद में तीर्थ यात्रा करने जाते हैं और अपने धार्मिक नियमों का पालन करते हैं।

राखंगार यहां ही का राजा था। बड़ा धर्मात्मा, सुशील, सदाचारी और साधु स्वभाव का था। भगवान ने उसे हर प्रकार से सकल गुण निधान बना रक्खा था। जिन दीन दुखियों को कहीं भी ठिकाना नहीं मिलता था वह उसके राज्य में जाकर आश्रय पाते थे। उसकी सेवा व दान का द्वार सर्व साधारण के हेतु सदैव खुला रहता था। यद्यपि उसका राज्य अधिक बड़ा न था मगर उसके उदार चित होने के कारण उसके सदाचार की प्रशंसा अन्य राजाओं के ईर्षा और द्वेष का कारण बनी हुई थी। राजा का नियम था वह रात दिन राज्य के काम काज में व्यस्त रहता था। मंत्री तथा धनी मानी लोग सब ही सम्मति देने वाले थे, पर यह न तो किसी से अपने करने योग्य कर्म को कराता था और न दूसरे राजाओं के समान अपनी प्रजा के दुख सुख का हाल दूसरों से सुनने का अनुयाई था। सर्दी हो या गर्मी, बरसात हो या आंधी राजा सदा दौरे में रहा करता था और देश के हर भाग में जाकर सब की दशा का स्वयं अनुभव किया करता था।

एक समय वह घूमते फिरते मजीबड़ी गांव में आया। राजा का डेरा बस्ती के बाहर खड़ा किया गया। गांव के लोगों ने राजा का आगमन सुनकर अपनी योग्यता के अनुसार खाने पीने का उचित प्रबन्ध किया। जो सामान जिसके यहाँ था अपने सिर पर लाद लाया। इन लाने वालों में एक सुन्दर कुमारी भी थी जो मिट्टी के बरतन भांड़े लाई। सर पर भारी बोझ था लशकर के आदमी औरों का बोझ उतारने लगे। लड़की के हाथ पाँव कांप

रहे थे। राखंगार की दृष्टि स्वयं उस पर पड़ी। वह राजा था। मन को वश में रखने वाला विख्यात था, परन्तु सौन्दर्य का जादू अति बली होता है। राजा हो या फ़कीर सबही उसके आधीन हो जाते हैं। लड़की फटे पुराने वस्त्र पहन रही थी। शरीर पर कोई आभूषण तक न था। ऐसे अवसर पर सौन्दर्य की छटा और भी अधिक चमक उठती है। वह आप ही उसकी ओर बढ़ा।

पतिव्रता मैली भली काली कुचल कुरूप।
पतिव्रता के रूप पर वारूं सकल सरूप॥

अपने हाथ से उसका बोझ उतारा। राजा को इस नीच लड़की की ओर बढ़ते हुये देख कर कर्मचारी उधर झुके। राजा ने हंस कर कहा तुम दूसरों की सहायता करो। मैंने इसके बर्तन उतार लिये हैं। यह आदेश सुनकर वह लोग चले गये।

राजा ने फिर सिर से पांव तक उस लड़की को देखा। एड़ी से चोटी तक वह सौन्दर्य के सांचे में ढली हुई थी। उसकी आयु उस समय १२ या १४ वर्ष से अधिक न रही होगी। राजा ने पूछा कि तू कौन है?

लड़की—मैं जाति की कुम्हारि हूँ।
राजा—यह तो मैं जानता हूं।
लड़की—फिर मैं और क्या बताऊँ?
राजा—तेरे पिता का क्या नाम है?
लड़की—उसका नाम हड़मति है।
राजा—हड़मति के नाम का तो यहां पहले कोई मनुष्य नहीं रहता था।
लड़की—हम लोग यहां के प्राचीन निवासी नहीं हैं।
राजा—फिर तू कहां की रहने वाली है?
लड़की—बाल्यावस्था में देश छोड़ने को विवश हुये।

मुझे ठीक २ नहीं मालूम कि मैं किस जगह पैदा हुई थी। पिता को सब कुछ मालूम है ।

राजा—तू तो बड़ी सुन्दर है।

लड़की—लजाई ! जी में तो आया कि जिभ्या बन्द करले। पर सीधी साधी गँवारी ने सोचा कि यदि चुप रहती हूँ तो ख़बर नहीं राजा क्या समझे। इसलिये उसने नीची निगाह करके दबी जुबान में कहा यह सब आपकी कृपा है।

राजा—हंसा। लड़की तू क्या कहती है ! क्या तू मेरी कृपा से सुन्दर पैदा हुई है ? यह ग़लत है । कुम्हार बेशक मिट्टी के सुन्दर बर्तन बना सकता है, पर देश के राजा को प्रजा के सुन्दर या कुरूप बनाने से क्या सम्बन्ध है ?

लड़की लजाई—सोच समझ कर बोली। कृपा सागर राजा सब प्रकार से समर्थ है ।

राखंगार खिल खिलाकर हंस पड़ा और बोला यह तो तेने आज बड़ी विचित्र बात सुनाई। अब तक तो मैं अपने आप को कुछ और ही समझ रहा था आज मुझे सर्व शक्तिमान और समर्थ कह रही है।

लड़की ने मन में संकोच किया । शायद बात करने में ग़लती हुई। वह चपल और चतुर नहीं थी। गांव में रह कर लड़की लड़कों को इतना साहस नहीं होता कि वह किसी रईस या राजा के सामने निर्भय होकर वार्तालाप कर सकें। फिर यह लड़की तो कुम्हार के घर की थी। इस बेचारी को इतना साहस कहाँ था कि देश के राज्य की बातों का ठीक २ उत्तर दे सकती। पर उसने मन को संभाला और लड़ खड़ाती हुई जुबान से कहा श्री महाराज मैं गांव की रहने वाली हूँ बात चीत करने की मुझे योग्यता नहीं है। मैं तो यह ही समझती हूँ कि राजा में सबसे अधिक शक्ति होती है।

राजा—मगर राजा सुन्दर प्रजा कैसे पैदा कर सकता है ?

लड़की के दिल को राजा की बातों से साहस मिलना शुरू हुआ। वह स्वभाव का दयालु था। इसके सिवाय उस लड़की के असाधारण रूप लावण्य का जादू उस पर चल गया था। उसकी भोली भाली बातें और भी ग़ज़ब ढा रहीं थीं। भोली भाली सूरत की सुन्दरता अधिक मोहनी होती है। आकर्षण और सहानुभूति दूसरों के दबे हुये दिलों को उभार देते हैं। लड़की ने कहा महाराज की जय हो ! गांव के लोग कहते हैं। "जैसा राजा वैसी प्रजा" ! जैसे आप हैं वैसी आपकी प्रजा होगी।

राजा—तो इस से साबित है कि मैं भी सुन्दर पुरुष हूँ यह मैंने आज तेरी ज़बानी नई बात सुनी है कि सुन्दर राजा की प्रजा भी सुन्दर होती है। तूने मुझे पहले सबसे अधिक शक्तिशाली बताया। अब सुन्दर कहती है। क्या मैं सुन्दर हूँ।

लड़की शरमाई ! वह शिष्टाचार क्या जानती थी, मगर चूँकि राजा के हित चित की सहानुभूति का उस पर प्रभाव था। उसने साहस पूर्वक उत्तर दिया, हां महाराज आप बहुत सुन्दर हैं।

राजा ने फिर क़हक़हा लगाया। मैं किस तरह सुन्दर हूं ?

लड़की—यदि आप सुन्दर न होते तो ग़रीबों के साथ इस तरह खुल कर बात चीत न करते। जो ग़रीबों पर दया करता है वह ही सुन्दर है।

राजा—तो फिर मुझे तू सुशील और सभ्य कहले। सुन्दर क्यों कहती है ?

लड़की— जो जिसके अन्दर रहता है वही तो बाहर निकलता है। घड़े के भीतर जैसा पानी होता है वैसा ही तो दूसरे बरतन में उँड़ेला जायगा।

राजा—यहाँ दो बरतन कौन हैं।

लड़की—एक आप और दूसरी मैं।

राजा—पानी किस तरह उंडेला जारहा है ?

लड़की—पानी ख्याल है। वार्तालाप है। आपके दिल में जो बात है वह उसी तरह आप की ज़बान से बाहर निकल कर मेरे कानों के रास्ते से दिल में समा रही है। जिस प्रकार घड़े का जल लोटे में भरता है।

राजा ने विचार किया। यह लड़की बहुत समझदार भी है। कुम्हार जाति होकर ऐसी ज्ञानियों की सी बात चीत कर रही है। उसने कहा अब तक तो मैं तुझे सुन्दर ही समझता था। अब सुशील और सभ्य भी समझता हूं। कुम्हार की पुत्री में ऐसी समझ बूझ नहीं होती।

लड़की—यह सब आपकी दया है।

राजा—फिर वही बात इस में मेरी दया क्या है ?

यदि आप मुझ पर इस क़दर दयालु न होते तो मुझे बात करने का इतना साहस कहां होता। मैं आपकी प्रेरणा और सहानुभूति से ज़बान खोल रही हूँ। और जो कुछ कह रही हूं वह आप की ही दया का प्रतिबिंब है। गोल घड़े का चांदनी में गोल ही प्रतिबिंब पड़ता है। चौड़े घड़े की परछाईं चौड़ी पड़ती है। आप अच्छे न होते तो मुझे आप अच्छा न समझते। जो अच्छा कहता है, अच्छा सुनता है, जो अच्छा करता है, अच्छा फल पाता है। जो अच्छा सोचता है उसे हर जगह सब अच्छा ही अच्छा नज़र आता है।

राजा—इस कुमार अवस्था में तूने ऐसी ज्ञान की बातें कहां सुनी थीं।

लड़की—मेरे घट में कभी २ एक साधु आते रहते हैं। पिता जी उनका बड़ा सम्मान करते हैं। यह बातें मैंने उनही से सुनी थीं।

राजा—लड़की मैं आज तुझे देखकर बहुत ही खुश हुआ हूँ।

लड़की—मुझ से अधिक संसार में बड़भागी और कौन हो हो सकता है जिसके सिर के बोझ को आपने अपने कर कमलों से उतारा। क्या मैं कभी आयुर्पर्यन्त इसे भूल सकती हूँ।

राजा—उसके इन आखिरी शब्दों को सुनकर प्रसन्न हुआ वार्तालाप में १५–२० मिनट बीत गये थे। उसने फिर ज्यादा बात-चीत नहीं की। लशकर वालों को आश्चर्य हो रहा था कि राखंगार को आज हो क्या गया कि जो एक नीच कुम्हारिन के साथ इस क़दर समय व्यतीत कर रहा है। लेकिन वे क्या समझ सकते थे कि राखंगार अगाध प्रेम की मनोहर छवि के प्रभाव में आ गया है।

राजा ने अपने हाथ की अँगूठी उतारी और दो चार रुपये लड़की को देकर बोला रुपयों को खर्च करना और अँगूठी को संभाल कर रखना। जब ज़रूरत पड़े यह अँगूठी आसनी से तुझ को मेरे महल में पहुँचने का सुअवसर प्रदान करेगी। जा हड्मती अपने बाप को भेज दे। मैं उससे कुछ पूछना चाहता हूं।

लड़की ने रुपये और अँगूठी ले लिये। हाथ जोड़कर नम-स्कार किया। और खुशी २ उछलती कूदती हुई गांव की ओर चली गई। पिता को राजा का संदेश कह सुनाया तथा उसके दिये हुये रुपये और अँगूठी दिखलाई।

राखंगार दिल ही दिल में कुछ सोचता हुआ अपने डेरे में चला गया।

तीसरा अध्याय

असलियत परिचय

दूसरे दिन हड़मती कुम्हार राखंगार के डेरे में हाज़िर हुआ। दरबान ने राजा को खबर दी। उसी समय अन्दर बुलाया गया। सलाम किया। राजा ने पूछा क्या तुम हड़मति हो?

हड्मति—हाँ सरकार मेरा यह ही नाम है।

राखंगार—तुम यहाँ के रहने वाले नहीं मालूम होते ! तुम्हारा चलन दूसरी जगह का सा है !

हड़मति—सत बचन ! मगर अब मैं सरकार ही की प्रजा हूँ।

राखंगार—यहां कब से रहते हो ?

हड़मति—केवल डेढ़ साल हुआ है।

राखंगार—तुम्हार असली देश कहाँ है ?

हड़मति—मैं पहले सिंध का रहने वाला था। दाना पानी खींच कर यहां लाया अब मेरा यह ही देश है। अब यहाँ ही रहूँगा और यहाँ रह कर सरकार के जान व माल की दुआ देता रहूंगा।

राखंगार—हँसा। बहुत अच्छा मैं तुमको देखकर अति प्रसन्न हुआ। क्या तुम जानते हो कि मैंने तुमको क्यों बुलाया है ?

हड़मती—मेरी लड़की रानक देवी कल शाम को सरकार के लिए बरतन भांड़े लाई थी। सरकार ने उसे कुछ रुपये और एक सोने की अंगूठी दी। वह खुशी २ घर गई। मुझ से कहा सरकार ने याद किया है और मैं हाज़िर हो गया।

राखंगार—तुम्हारी लड़की बड़ी सुन्दर है। उसकी समझ बूझ भी अच्छी है।

हड़मती—हां वह ऐसी ही है। कल वह जब से सरकार को देखकर गई है वह खुशी से फूली नहीं समाती।

राखंगार—खुशी की तो इसमें कोई बात नहीं थी।

हड़मती सरकार हम लोग ग़रीब हैं। संसार में ग़रीबी से बुरा कोई दुख नहीं होता। एक तो मैं कंगाल और दूसरे जाति का कुम्हार ! कड़ुआ करेला और फिर नीम चढ़ा। ऊँची बिरादरी के लोग हम से सीधे बात तक नहीं करते। बात करना तो एक ओर रहा वे हम को कुत्ते और बिल्ली से भी अधिक अपवित्र समझते

हैं यदि श्री महाराज की दया दृष्टि देखकर मेरी लड़की इस क़दर खुश हुई है तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं है। सरकार का महरवान होना हमारा अहो भाग्य है! वरन् और कोई आदमी हम से कहां बोलने लगा था।

राखंगार—तुम सच कहते हो। हिन्दुओं में नीची ऊँची जाति के भेद भाव ने बड़ा निंदित रूप धारण कर रक्खा है, पर क्या किया जाय। प्राचीन समय से इसी प्रकार की परिपाटी पड़ी हुई है।

हड़मती—यह हमारे पहले जन्मों के पाप का फल है कि नीची जाति में पैदा होकर ऐसे अपवित्र समझे जाते हैं। वरन् देखा जाय तो ब्राह्मण और शूद्र के खून में कोई फ़र्क़ नज़र नहीं आता। शास्त्रों ने हम को अछूत बना रक्खा है।

राखंगार—किसी समय में कुछ सोचकर किसी राजा ने ऐसा रिवाज जारी कर दिया होगा। वह अब तक चला आता है, मैंने हिन्दुओं के इस व्यवहार में कुछ परिवर्तन करना चाहा पर अभी तक कोई परिणाम नहीं हुआ। मैं तुमको अछूत नहीं समझता।

हड़मती—यह श्री महाराज की दया है और इसी विचार से तो मैंने सोरठ देश में आकर बसना स्वीकार किया। सरकार के राज में बकरी और भेड़िये एक घाट पर पानी पीते हैं। सिंह के पास हिरन आराम से सोता है। किसी को किसी से भय नहीं है। आश्चर्य नहीं कि कभी श्री महाराज की कृपा से जो यह दोष व धब्बा जो हमारी जैसी नीच जातियों पर लग गया है वह मिट जाय और उनकी यह दुर्दशा, रूप रंग और जात पांत का भेद भाव जाता रहे।

राखंगार—ईश्वर करे ऐसा ही हो! मगर मैंने तुमको इस समय किसी और खास बात के पूछने के लिए बुलाया है।

हड़मति—आज्ञा हो तो मैं जो कुछ जानता हूँ अर्ज़ करूँ।

राखंगार—तुम बड़े चतुर और समझदार हो । तुम्हारी लड़की सुन्दर और तीव्र बुद्धि वाली है । क्या तुम सचमुच कुम्हार ही हो ? या किसी कारण वश तुमने यह भेष बना रक्खा है । कुम्हारों में न कहीं ऐसा सौन्दर्य नज़र आता है न यह समझ बूझ दीख पड़ती है ।

हड़मति—दिल में डरा । दो चार पल सोचने को मजबूर हुआ । फिर उसने कहा । अन्नदाता ! यह सौन्दर्य और बुद्धि किसी ख़ास जाति की बपौती नहीं है । आप ही को ग़रीब और नीची जाति की प्रजा में बहुत से लड़के और लड़कियां ऐसे मिलेंगे जो शिक्षा और दीक्षा पाने पर जाति के अमूल्य रत्न साबित होंगे । पर खेद तो यह है कि उनकी ओर किसी की दृष्टि नहीं है और न उनको उभरने का मौक़ा मिलता है । न उनको गुप्त और दबी हुई योग्यता के प्रगट होने की कहीं सामग्री है ।

राखंगार—हड़मति ! मुझे तुम्हारी बातों से यक़ीन हो रहा है कि तुम वह नहीं हो जो इस समय बने हुये मालूम होते हो । तुम इस प्रकार की बातें करते हो जो केवल पढ़े लिखे लोग ही करते हैं । तुम्हारी बातें सब की सब सत्य हैं । मैं बहुत दिनों से खुद इसी चिंता में हूं कि शिक्षा का द्वार सबके लिये एक समान खोल दूं ।

हड़मति—तब तो फिर धारा नगरी के महाराज मौज का समय वर्तमान हो जायगा । उस राजा ने अपने देश में आज्ञा दे रक्खी थी कि उसकी प्रजा में से कोई मनुष्य भी अपढ़ न रहे । यदि कोई संस्कृत न पढ़े तथा अपनी सन्तान को विद्या और कला-कौशल के सीखने में बाधक हो तो उसको मालवा देश से सदा के लिये देश निकाला दे दिया जाय । उसके राज में विद्या व कला कौशल का भारी रिवाज हो गया था । तेली, तमोली, भरभूजे और कलाल तक संस्कृत के बड़े विद्वान बन गये थे ।

पर खेद है कि जात पांत के बन्धन ने उसकी आंख मिचते ही फिर उसी दुर्दशा का रूप धारण कर लिया। उसने इतना और बढ़ा दिया कि जहां पहले ब्राह्मण, क्षत्री और वैश्यों की स्त्रियां पढ़ी लिखी होती थीं, भोज के बाद इन बेचारियों को भी विद्या रत्न की प्राप्ति से शूद्रों की भांति रोक दिया और शास्त्रों से यह साबित कर दिया कि स्त्रियां चाहे वे किसी जाति या वर्ण की क्यों न हों दुजन्मी नहीं हैं न उनका यज्ञोपवीत संस्कार होता है, इस कारण उनको पढ़ने पढ़ाने का कोई अधिकार नहीं है। अन्त में इस ग़लत निर्णय का यह परिणाम हुआ कि माताओं के अपढ़ रहने से उनकी संतान स्वयं अपढ़ और अज्ञानी हो गई। आज क्षत्री वैश्य तो सबके सब कोरे ही हैं, ब्राह्मणों में भी सौ में सै कठिनाई से दो चार मनुष्य शास्त्रों के पढ़े लिखे मिलते हैं। सिंध, कछ, गुजरात आदि की यह ही दशा है। आप के राज्य में भी ऐसा ही दृश्य दिखाई दे रहा है। यदि श्री महाराज ने कहीं नये सिरे से विद्या का प्रचार किया तो संसार आप को दूसरा राजा भोज कहने लगेगा।

राखंगार—मैं ऐसा ही करूंगा। कम से कम मेरी ओर से कोशिश तो जरूर होगी। लेकिन मैंने जो तुमसे अभी सवाल किये हैं उनका उत्तर चाहता हूँ। यह मैंने भली भाँति विचार कर लिया है कि तुम्हारी जैसी योग्यता और तुम्हारी जैसी लड़की का सौन्दर्य कुम्हारों में कहीं नज़र नहीं आता है। तुम कुम्हार नहीं हो।

हड़मति—अन्नदाता! मेरी लड़की रानक देवी कुम्हारी नहीं है। यहां तक तो सरकार का विचार सत्य है लेकिन मैं जाति का कुम्हार ही हूं। सिंध देश में मुझे अच्छे लोगों का संग प्राप्त हो गया था, इस कारण मैं विद्या सीख गया था। काल चक्र ने मुझे देश से विदेश भेज दिया और चूंकि कुम्हार अपने मौरूसी

बाप दादा के काम के अतिरिक्त कोई अन्य पेशा नहीं कर सकता इस कारण मैं कुम्हार का कुम्हार ही बना हुआ हूँ। अपनी जाति बिरादरी में रह कर उन्हीं के समान जीवन व्यतीत करता हूँ।

राखंगार—खैर! मेरा विचार किसी हद तक सच निकला। अब तुम यह बताओ कि यह रानक देवी वास्तव में किस वंश की है?

हड़मति—यह सिंध देश के पादर भूमि के राजा देवड़ा की लड़की है और कुल की राजपूतनी है।

राखंगार—की आँखें खुशी से चमक उठीं। यह तुम्हारे हाथ कैसे लगी?

हड़मति—रानक देवी मूलों में पैदा हुई थी लगन शुभ नहीं थी। राजा के ज्योतिषियों ने कहा यह जिस घर में रहेगी वह घर नष्ट हो जायगा। सम्भव है ज्योतिषियों का यह निर्णय सत्य हो। सम्भव है ग़लत हो। राजा देवड़ा मन में डरा। उसे ज्योतिष पर बड़ा विश्वास है। लड़की चूंकि सुन्दर बहुत थी। रानी उसका बिछोह कदापि पसंद न करती। राजा ने उसे धोखा देकर अपने विश्वास पात्र कर्मचारियों के हाथ जंगल में ले जाकर एक गड्ढे में डलवा दिया जो फाड़ खाने वाले पशु उस दीन हीन बालक को खा जांय। मैं बर्तन बनाने के लिये उस गड्ढे से मिट्टी लाया करता था। जब प्रातःकाल मैं वहां पहुँचा लड़की रो रही थी। मेरी अपनी कोई सन्तान नहीं थी मुझे उस पर दया आई। अपने घर उठा लाया। मेरी स्त्री ने उसे गाय का दूध पिला कर पाला। अभी दो एक सप्ताह से अधिक नहीं व्यतीत हुआ था कि सारे शहर में मशहूर हो गया कि राज महल से कन्या ग़ायब है। मैं जी में डरा कि कहीं मुझ से कोई मनुष्य यह लड़की न छीन ले जाय अथवा विश्वास हीन राजा दुबारा उसके क़तल करने की आज्ञा न दे दे। मैं उसको और अपनी स्त्री को

साथ लेकर कच्छ देश में चला आया और वर्षों कंथ कोट नामी गांव में रहा। वहां ही यह स्यानी हुई। यह इसका संक्षेप रूप में वृतान्त है।

राखंगार—फिर तुमने कंथ कोट क्यों छोड़ा ? क्या वहां किसी प्रकार का कष्ट हुआ था ?

हड़मति—क्या कहूँ ! इस रानक के लिये मुझे बड़े २ दुख भोगने पड़े हैं। जब मेरी लड़की की आयु दस ग्यारह वर्ष की हुई उसके रूप लावण्य का हाल दूर दूर पहुँच गया। कच्छ देश के राजा राउ लाखा फूलानी ने भी सुना। भेष बदल कर कंथ कोट में आया। अपनी आँखों से लड़की को देखा। मुझे बुलाया और इसके साथ शादी करने का अग्रह किया। मैंने विनय की कि कुम्हार की लड़की से विवह करना अपराध माना जाता है, मगर उसने मेरी एक बात भी न सुनी। और मुझ से कहा कि मैं इस लड़की को अपनी पट रानी बनाऊँगा। मेरे भी जी में आया कि लड़की का उसके साथ विवाह कर दूं। राजा से कहा कि मैं अपनी जाति विरादरी से पूछ कर उत्तर दूंगा। उसे विश्वास था क्योंकि राजा को अपने बल का बहुत भरोसा होता है। मगर जब मैं दरबार से वापिस आया और अपनी स्त्री से यह हाल कहा वह राज़ी नहीं हुई। रानक ने भी कहा पिता जी ! मुझे ऐसे पुरुष के घर भेजो जिसे मैं प्यार कर सकूं और जिसके यहां कई स्त्रियां न हों मैं बड़े सोच में पड़ गया और मजबूरी की हालत में रानक और अपनी स्त्री को लेकर रातों रात कंथ कोट से भाग कर मंजिलें तें करता हुआ मजीवड़ी में आया। यहां मुझको विश्वास दिलाया गया कि सोरठ देश में कोई किसी पर अत्याचार और अन्याय नहीं करता। मैं इस जगह ठहर गया। जी यह ही चाहता है कि इस देश को छोड़ कर कहीं न जाऊं।

राखंगार—अभी तक तुम्हारी लड़की की शादी का चरचा कहीं हुआ है या नहीं ?

हडमति—अब तक इस ओर मेरा ध्यान नहीं है। लड़की स्यानी हो गई है। यदि कोई कुम्हार योग्य मिल जाय तो मैं उसी के साथ इसका विवाह कर दूंगा। कठिनाई केवल इतनी है कि यहां के कुम्हारों में से अब तक किसी ने मुझे अपनी बिरादरी में नहीं मिलाया। मैं भी समय को देख रहा हूँ। जब समय आवेगा खुद बखुद विवाह हो जावेगा कन्या कभी कारी नहीं रह सकती। वृह्मा ने हर कन्या के लिये कोई न कोई वर पैदा कर रक्खा है। शास्त्र ऐसा ही कहते हैं। इस कारण मुझे चिंता नहीं है।

राखंगार—मगर तुमने यह भी अभी कहा था कि रानक देवी अशुभ घड़ी महूरत में पैदा हुई है।

हडमति—पर मेरा इस पर विश्वास नहीं है मैं रानक को भाग्यवती समझता हूँ। जब से यह मेरे घर आई है। भले ही मुझे दो बार घर बार त्यागने को विवश होना पड़ा है पर घर भरा रहता है। किसी प्रकार का मुझे दुख नहीं है। यहां मजीवड़ी आने पर मेरी स्त्री के लड़का भी पैदा हो गया है जिसको रानक रात दिन खिलाती रहती है।

राखंगार—इस लड़की का नाम रानक तुमने रक्खा है या पहले से ही यह रानक कहलाती है।

हडमति—यह नाम मैंने ही रक्खा है। क्योंकि वह 'रन' यानी गड्ढे में मिली थी। इस कारण मैंने उसका नाम रानक रक्खा।

राखंगार—देखना जब तक मैं तुमको आज्ञा न दूं इसका विवाह किसी के साथ न करना।

हडमति—पर अन्न दाता ! यहाँ तो मुझे सहज में ही आपका दर्शन मिल गया। जूनागढ़ के दरबार में बेचारे कुम्हार को कौन घुसने देगा।

राखंगार—कल मैंने रानक देवी को एक अँगूठी दी है। जब तुमको या उसे मुझसे मिलने की इच्छा हो तुम दरबारियों को उसे दिखा देना। कोई रोक टोक न करेगा।

हडमति—बहुत अच्छा ! जो भी महाराज की आज्ञा।

राखंगार—अच्छा अब तुम जाओ मैं शीघ्र ही जूनागढ़ पहुँच कर तुम्हारी सुध लूंगा।

हड़मति—सत्त बचन ! महाराज, प्रणाम किया और अपने घर चला आया।

चौथा अध्याय

क़िस्मत (भाग्य)

"क़िस्मत का समझना भी नहीं काम है आसान"

हड़मति कुम्हार था। कुम्हारों का हिन्दुओं में क्या मान आदर है ? कुछ भी नहीं। बेचारे सब के सब संतोषी, आज्ञा पालक और सहनशील होते हैं। पर जिस प्रकार कभी २ चूहों में कोई २ ऐसे चूहे भी पैदा हो जाते हैं जो हाथ से पकड़ने वाले मनुष्यों को डरा देते हैं और अपने आपको औरों से श्रेष्ठ प्रकट कर दिखाते हैं। उसी तरह यह हड़मति भी था। बिना स्वार्थ के न किसी से मिलता था, न किसी की खुशामद करता था। ईमान दार भी हद दर्जे का था। प्रारम्भ में तो उसे सब लोग अहंकारी समझते थे। पर जब कुछ समय पर्यन्त सब को मालूम होगया। कि यह अपने चलन का पक्का मनुष्य है। मजीबड़ी के ब्राह्मण, क्षत्री, वैश्य, शूद्र सब ही उसका मान आदर करने लगे। नियमानुसार स्वाभाविक जीवन वास्तव में, सुख, शांति, मान और उदासीनता का जीवन है। एक बार तुम किसी मुख्य साधन को धारण तो करलो। साहस और दृढ़ता पूर्वक उस पर आरूढ़ हो रहो। प्रारम्भ में यदि कुछ थोड़ा कष्ट सहन करना पड़े तो उसकी

तनिक चिंता न करो। थोड़े काल पर्यन्त ही तुमको वह आनन्द प्रतीत होने लगेगा जो राजे महाराजों के भाग्य में भी नहीं है। हड़मति इसी प्रकार के नियम का पालन करने वाला मनुष्य था।

यह दिन को काम काज करता। संध्या समय नित्य प्रति एक महात्मा के सत संग में जाता था जो वैरागी ब्राह्मण था। रामानुज सम्प्रदाय का साधु था और यह सम्प्रदाय षट कूप कंजर से चलने के कारण, जो एक महा नीच जाति का मनुष्य था, रामानुज स्वामी ने भी गुरु की शिक्षा को महत्व देकर, साधारण रूप में छूआ छूत को दृष्टि में रखते हुये, शूद्र वैश्यों के साथ भी प्रेम भाव का व्यवहार रखने का आदेश दिया था। इस विशेषता के कारण रामानुज की श्री सम्प्रदाय ने किसी समय में हिन्दुओं में कुछ अंश तक अच्छा सुधार किया था। वैरागी का नाम कृष्ण दास था। उस दिन वह स्वतः ही कुम्हार के घर आया। हड़मति ने उसको नमस्कार किया। बैठने को आसन बिछा दिया। पंजी हड़मति की स्त्री, रानक और अड़ौस पड़ौस के अन्य स्त्री पुरुष सब उसके आने की खबर पाकर वहाँ आगये। और साधु को नमस्कार करके उसके उपदेश को सुनने को बैठ गये।

हिन्दुओं में साधु के समाज की बड़ी माहमा व प्रतिष्ठा है। यदि कहीं इनसे काम लिया जाता अथवा समाज इनको किंचित भी उपकारी बना लेता तो जो कार्य दूसरे सुधारक वर्षों में करते हैं और उसका कोई परिणाम नहीं होता साधु उसे मास सप्ताह बल्कि दिनों में कर दिखाते। यह देश और जाति का दुर्भाग्य है। कलंक है कि यह समाज का नितान्त मिटाने वाला दोष बन गया है।

हड़मति ने कहा—श्री महाराज! आज रानक देवी बड़ी प्रसन्न है। राजा राखंगार ने उसे चार रुपये दिये हैं। और एक सोने की अँगूठी भी प्रदान की है। रानक ने इन रुपयों में से

आप के लिये कई आने की मिठाई मोल ली है।

कृष्णदास हंसा। क्यों न हो रानक भाग्यवती पुत्री है। इसका भाग्य अच्छा है।

हडमति–महाराज आपके बचनों में मेरा भी विश्वास है।

कृष्णदास–नहीं २ देखो तो सही ईश्वर ने इसको कैसा शोभायमान रङ्ग रूप दिया है। सौन्दर्य, बल, विद्या और अच्छी स्त्री यह सब भाग्य से ही मिलते हैं। सच है कि कभी २ बाहरी रूप से धोखा हो जाया करता है और सौन्दर्य इन्द्रायन के फल के अनुरूप प्रतीत होता है। पर सदा ऐसा नहीं हुआ करता। अधिकाँश सुन्दर रूप वाले अच्छे ही होते हैं।

हडमति–सत बचन !

कृष्णदास—रानक को कौन कुम्हारी की लड़की कहेगा। यह तो किसी राजा की राज कन्या प्रतीत होती है।

हडमति–सत बचन !

कृष्णदास–फिर देखो किस तरह बैठती उठती बोलती चालती है। न कभी किसी पर क्रोध न किसी से लड़ाई झगड़ा ! यह सब बड़प्पन की बातें हैं।

हडमति–सत बचन !

कृष्ण दास–मैंने तो जब इसे पहली बार देखा था तब ही समझ गया था कि यह बड़ी भाग्य शाली है और किसी बड़े घर में जायगी।

रानक देवी आखिरी बात सुनकर शरमा गई।

हडमति–क्या करूं महाराज ! मेरी लड़की स्यानी हो गई। अब तक इसके लिये कोई योग्य वर नहीं मिला। मेरी स्त्री को तो अब अन्न जल भी नहीं भाता। शास्त्र भी ऐसा कहते हैं जिसके घर स्यानी लड़की हो वह पाप का भागी होता है।

कृष्णदास–चिंता न करो। ईश्वर स्वयं इसका प्रबन्ध कर देगा। अभी तक इसका भाग्य सोया हुआ है। पर मैं तुमसे यह बात कहे देता हूँ कि रानक कुम्हार के घर जाने योग्य नहीं है।

हडमति–भगवान्! आपने कई बार भाग्य का वर्णन किया है। भाग्य आखिर चीज क्या है? लोग तो यह कहते हैं कि मनुष्य इस जन्म में जो भले बुरे कर्म करता है दूसरे जन्म में उन्हीं कर्मों का भोग, भाग्य होता है। और उसी के अनुसार फल मिलता है, क्या यह सत्य है।

कृष्णदास—सत्य भी है और असत्य भी।

हडमति—किस तरह?

कृष्णदास—कर्मों के संस्कार से प्रारब्ध बनता है। इसी प्रारब्ध के भोग को कुछ मनुष्य अपनी ना समझी से भाग्य कहते हैं। भाग्य वास्तव में, प्रारब्ध से भिन्न चीज है। प्रारब्ध केवल उस कर्म या कर्म के संस्कार को कहते हैं जो हाल के जीवन से पहले का हो। प्रय=पहले और रब्ध=यह शुरू होना। और भाग्य इस प्रारब्ध से भी पहिले की वस्तु है।

प्रारब्ध का सम्बन्ध पराक्रम, महनत, पुरुषार्थ और कोशिश से है। जो मनुष्य इस जन्म में अच्छे कर्म करता है मगर जिनका फल अभी नहीं मिलता बल्कि संचित हो जाता है उन कर्मों का फल दूसरे जन्म में भोगता है यह प्रारब्ध है यह भाग्य नहीं है।

हडमति—प्रभो! हमारी वैष्णव सम्प्रदाय में तो प्रारब्ध ही को भाग्य माना गया है। कृष्णदास सुनो हडमति! साधारण रूप में तो सब प्रारब्ध ही को भाग्य मान रहे हैं। मगर क़िसमत, भाग्य कोई ऐसी वस्तु है जो प्रारब्ध से ऊंची है।

हडमति—फिर यह भाग्य आखिर क्या चीज है?

कृष्णदास—क़िसमत कहते हैं भाग को बांट को भाग नाम है अंश का भाग भी भाजित अंश का नाम है। यह मानुषी

अस्तित्व (हस्ती) का वह बुनियादी या आदि का अंश है जिसका सिलसिला बड़ी दूर से चला आता है और जिसका भाग बराबर आदि से अंत तक मिलता रहा है । जैसे (तुम समझो) ईश्वर के मन में रचना करने की फुरना हुई। यह फुरना एक प्रकार का कोष अथवा प्रथम धन है जिसका भाग या अंश अणु २ चर और अचर हर प्रकार के प्राणी को मिला है, क्योंक यह जो कुछ तुमको दृष्टि गोचर हो रहा है वह सब ईश्वर की फुरना का ही प्रगट रूप है जो भाजित वस्तु के रूपों में सब जगह बिखरा हुआ प्रतीत होता है और सब अलग २ दिखाई देते हुये भी सब के सब एक ही रिश्ते या डोरी, में बंधे व गुथे हुये हैं। वह रिश्ता या डोरी ही भाग है जिसने सब को अपना २ निजी भाग दे दिलाकर एक में गुथ रक्खा है, बांध रक्खा है।

हड़मति—समस्या केवल कठिन, बल्कि बड़ी गूढ़ होगई। क्या किसी उदाहरण से इसकी व्याख्या नहीं हो सकती ?

कृष्णदास—क्यों नहीं—मगर उदाहरण में पूरे पूरे अङ्ग नहीं आते। यह कमी है ! फिर भी मैं तुमको उदाहरण से ही समझाने का प्रयत्न करूंगा । यों विचारो कि तुम्हारे पास कई मन अन्न है। उसको तुमने दो चार या दस बीस घड़ों मटकों में बांट कर रख छोड़ा है। यह अन्न घड़ों की दृष्टि से बँटा हुआ है, भाजित है और उन घड़ों का भाग है। बिल्कुल इसी प्रकार ईश्वर के संकल्प या फुरना का हाल है । यह उसके संकल्प का ही परिणाम है कि जो सर्व व्यापक और सर्व स्थानी होकर सब में चलायमान और अचल दृष्टि गोचर हो रहा है। और सर्वज्ञ, असीमित होता हुआ अनेक अल्पज्ञ, सीमित रूपों में कार्य कर रहा है। इस विभाजन हुये संकल्प के अधिकांश अंगों, भागों को यथार्थ में भाग माना जा सकता है।

हड़मति—इसमें कमीवेशी भी हो सकती है या नहीं।

कृष्णदास—नहीं जो जैसा है वैसा रहेगा। भाग में कमी वेशी अथवा घटाबढ़ी कैसी ?

हड़मति—फिर तो कर्म कुछ नहीं रहा, और न कर्म करने की कोई आवश्यकता ही शेष रही। जो जैसा है वैसा ही रहेगा। उसमें परिवर्तन नहीं होगा।

कृष्णदास—कठिनाई तो यह है कि तुम कर्म को भाग समझ रहे हो। मैंने तुम को बता दिया है कि कर्म और वस्तु है और भाग और वस्तु है। कर्म में तो घटाबढ़ी होती रहती है। मनुष्य परिश्रम करने से अपनी हालत में तबदीली पैदा कर सकता है। अभागा, ग़रीब भी भगवान, धनी हो जाता है। बलहीन, बली बन जाता है। यह तो सम्भव है मगर जिस ईश्वर के संकल्प या फुरना को हम भाग कह रहे हैं वह न बढ़ सकता है न घट सकता है। वह जैसा है उस समय तक वैसा ही रहेगा जब तक ईश्वर फिर अपने संकल्प को समेट न लेगा।

हड़मति समझदार था, सिन्ध देश में उसने कुछ संस्कृत और फ़ारसी भी पढ़ी थी मगर जब उसने साधु को भाग के विषयमें कर्म और परिश्रम से पृथक करते हुए देखा वह चकित सा रह गया। वह शुरू से बराबर सुनता चला आ रहा था कि तक़दीर पलटती नहीं और न तदबीर उसे तबदील कर सकती है। साथ ही समस्त आचार्य उपदेशक तदबीर से अपनी दशा के बदलने का उपदेश सुनाते आ रहे थे। साफ़ २ बात कोई नहीं कहता था आज कृष्ण-दास की संक्षिप्त व्याख्या ने उसके पहले भ्रम को दूर कर दिया। यह मसला या विषय ऐसा था कि इसमें अब भी बात चीत करने की गुञ्जाइश थी। मगर इस सतसंग के श्रोता सब के सब हड़मति या कृष्णदास जैसी समझ वाले नहीं थे। इसलिए उसने समझ बूझ कर फिर और कोई शंका नहीं की बल्कि साधु से पूछा महाराज! रानकदेवी के विषय में मैं कैसे विश्वास करलूँ कि यह बड़े भाग वाली है।

कृष्णदास—सुनो हड़मति! बाह्य रूप को देखकर मनुष्य

अपने अनुमान के घोड़े दौड़ाता है। जितनी सामुद्रिक विद्या आदि हैं तुम देखते हो मनुष्य के अनुमान अथवा मानसिक अनुमान के परिणाम हैं। हम ईश्वर के भक्त हैं। ऐसी बातों की ओर अधिक ध्यान नहीं देते। जो होगा उसकी इच्छा से होगा। अधिक विवेक विचार व्यर्थ है। ईश्वर का भजन पूजा करो। अपने कर्म उसकी भेंट चढ़ाते रहो। उसके अर्पण करते रहो। इससे अधिक हमको जानने या इच्छा करने की आवश्यकता नहीं है।

हड़मति—सत वचन।

कृष्णदास—मैंने रानकदेवी के सम्बन्ध में जो कुछ कहा है। केवल बाहरी दृष्टि से देखकर कहा है। वह बहुत सुन्दर है, सुशील है और बाहर भीतर भी पवित्र है। ऐसा व्यक्ति जब रहेगा अच्छी ही अवस्था में रहेगा। हां यह दूसरी बात है कि वह अच्छी हालत कैसी होगी। चमकदार मोती को कोई मनुष्य मैले घड़े में नहीं रखता न मैली चीज़ को सोने और चाँदी के बर्तनों में रखने का दस्तूर है। मनुष्य का यह स्वाभाविक गुण है कि जो वस्तु जिस व्यक्ति या जिस स्थान या देश के योग्य समझी जाय उसके लिए वहां और उसी के पास रखने का प्रबन्ध किया जाय। जो प्राकृतिक नियम अथवा स्वाभाविक गुण मनुष्य में है वह ही प्रकृति या ईश्वरीय रचना में भी काम करता है। केवल इस दृष्टि से मैंने यह बात कही थी।

हड़मति—सत वचन! मगर भगवन! कल राखंगार ने लड़की को चार रुपये और अँगूठी दी थी। आज मुझे बुलाकर कहा कि बिना उसकी आज्ञा के रानक की कहीं शादी न करना। इससे राजा का क्या प्रयोजन हो सकता है।

कृष्णदास—यह तो वह ही बात हुई जो मैंने तुम से अभी कही थी। अच्छी चीज़ अच्छे के पास और बुरी चीज़ बुरे के पास जाती है। कौन जाने राखंगार के जी में कैसे २ विचार पैदा हुये हों! वह धर्मात्मा है। शास्त्रों के आदेशों का पालन करता है।

बुराई की तो उसके स्वभाव से कभी आशा नहीं हो सकती। इस ओर से तू निश्चिंत रह। हां उसका इरादा क्या है यह नहीं कहा जा सकता! राजों का दिल समुद्र की भांति अथाह होता है। उस के अंदर कैसे भावों की हिलोर उठती हैं या उठेंगी इसका कोई अनुमान नहीं लगा सकता। समय पर यह भेद भी खुल जायगा इसमें चिंता करने की कौन सी बात है।

साधू फिर अधिक समय तक वहां नहीं ठहर सका। हड़मति से आज्ञा ली। उसने नमस्कार किया और वह विदा होकर अपने आश्रम को चला आया।

पांचवा अध्याय

(मशवरा)

"मशवरा कीजिये तो अच्छों से"

राखंगार ने पहले दिन पंद्रह मिनट तक रानक देवी से एकांत में बात चीत की थीं। दूसरे दिन उसके पिता से वार्तालाप हुई। दरबारियों को आश्चर्य हुआ। वह उड़ती हुई चिड़िया पहिचानते हैं। समझ गये कि कोई न कोई बात जरूर है। और नित्य प्रति का ताड़ने वाला भेद जानने वाला स्वभाव का अभ्यास उनको इतना तीव्र बुद्धि बना देता है कि वे शीघ्र ही दिल की बात को भांप लेते हैं। एक और एक या तो दो होंगे या ग्यारह होंगे। इसको ज्ञान मदरसे के शिक्षा पाने वाले बालक को भी होता है। भला दरबारी कैसे न जानते। पहले दिन की घटना तो साधारण सी जँची। राखंगार का स्वभाव था कि वह बहुधा अपनी ग़रीब से ग़रीब प्रजा तक से एकांत में मिला करता था। पर वह मिलना दरबारी और अहलकारों के जरिये से हुआ करता था। इस अवसर पर दूसरे दिन की घटना ने उन्हें चौकन्ना बना दिया। वे सोचने लगे हड़मति स्वयं राजा से कैसे मिलने आया। उसे मिलने का साहस

कैसे हुआ और राजा ने उसे किसी कर्मचारी से पूछे बिना अपने डेरे में कैसे आने दिया ? यह विचार थे जो उनके दिलों के समुद्र में ऊँची लहर बन कर लहराने लगे।

दौरे में राखंगार के साथ उसके दो भानजे बहुधा रहते थे जो गुजरात के इतिहास में वेशल और देशल के नाम से विख्यात हैं। उनकी माता राखंगार की बहिन थी। जब यह बाल्यावस्था में ही थे, पाटन देश के सोलंकी राजा सिद्धराज जैसिंह ने चतुराई से इनके इलाक़े छीन लिये। बेबसी की दशा में बहिन भाई के घर आई और दोनों लड़कों का भी जूनागढ़ ही में पालन हुआ। राखंगार इन दोनों पर अति दयालु था और वे इसकी नाक के बाल समझे जाते थे। इनकी माता का नाम मैनलदेवी था।

वेशल और देशल को आश्चर्य था। उन्होंने अपने तौर पर पूछ ताछ करने की कोशिश भी की। पर किसी बात का पता नहीं लगा। पता भी किस तरह लगता ! राजा ने हड़मति को केवल इतना ही आदेश दिया था कि रानक देवी का किसी के साथ विवाह न करना। इस के कई अर्थ हो सकते थे। इनके चित्त को चैन कहां ! दूसरे ही दिन सायंकाल के समय जब यह राखंगार के पास बैठे। उसने पूछा मजीबड़ी में तुमने क्या विचित्र बात देखी ? उनको अवसर मिल गया और इशारे २ में हड़मति और रानक का हाल छेड़ दिया।

वेशल—महाराज ! और क्या कहूँ। जो चीज़ यहां दीख पड़ी वह कहीं भी नहीं देखी। क्यों देशल ! ठीक है ना !

देशल—बेशक सच्ची बात है।

राखंगार-हंसा ! यह दोनों भाई इसी तरह बातचीत करते थे। वेशल जब कुछ ज़बान से निकालता देशल से उसी वक्त साक्षी लेता और वह उसकी बात सही कर देता। दोनों भाई एक साथ

पैदा हुये थे। जौल्ला थे और एक दूसरे के साथ प्यार प्रीति का व्यवहार रखते थे।

राखंगार ने पूछा—पर वह सच्ची बात क्या है ?

वेशल—अन्नदाता ! गड्ढे में कमल पैदा हुआ है और कऊऐ के सिर पर मोर पंख की कलंगी लगी है। क्यों देशल ! तुम्हारा क्या ख्याल है ?

देशल—जो तुम्हारी राय वही मेरी भी राय है। मैं भी ऐसा ही समझता हूं।

राखंगार—मुस्कराते हुये। मगर मेरी समझ में अब तक नहीं आया कि तुमने क्या समझा ?

वेशल—मैंने वह ही समझा है जो और लोगों ने भी समझा है। क्यों देशल ठीक है कि नहीं ?

देशल—इसमें क्या शक है ! बहुत ठीक !

राखंगार—मुस्कराता रहा। पहिले राजाओं के दरबार में मसखरे रहते थे। उनका यही काम था कि अनाप शनाप बातें करके राजा को हंसाते रहें। वेशल देशल चाहे मसखरे न कहलाये जायं, राखंगार उनके साथ प्रेम प्यार का व्यवहार करता था। मगर स्वभाव को क्या किया जाय। वे इससे मजबूर थे। हंसी मजाक और मसखरे पन के सिवाय उनको और बात नहीं सूझती थी और राजा भी उनको इस ओर से रोकता नहीं था।

राखंगार—वेशल ! ठीक क्या है ?

वेशल—हजूर ! सबसे विचित्र दृष्य जो हमने यहां आकर देखा। वह यह है कि ब्रह्मा ने कुम्हार के घर की मिट्टी से एक ऐसी सुन्दर मूर्त्ति गढ़ी है जो कदापि किसी मन्दिर में नजर न आवेगी। क्यों देशल तुम्हारी क्या सम्मति है ?

देशल—बेशक सच है।

राखंगार—समझ तो गया कि कुम्हार की मूर्त्ति से इनका

क्या अभिप्राय है। लेकिन पूछने से न रह सका । क्यों वेशल ! ब्रह्मा मूर्ति और मन्दिर से तुम्हारा क्या मतलब है ?

वेशल—हजूर ब्रह्मा तो है हड़मति कुम्हार । मन्दिर है उसका घर और मूर्ति है उसकी लड़की रानक देवी क्यों देशल ! तुम क्या कहते हो ?

देशल—अक्षरशः सत्य है ।

राखङ्गार–रानक देवी निःसंदेह बड़ी सुन्दर लड़की है । इसमें शक नहीं । मैंने भी उसे अपनी आंखों से देखा और हड़मति भी मेरे पास आया था ।

वेशल—हां हजूर ! यह और भी उसके सुन्दर होने का प्रमाण है । यदि वह इतनी सुन्दर न होती तो हजूर उसकी ओर कब दृष्टि डालने लगे थे । सौन्दर्य में जादू है ! क्यों देशल सौन्दर्य जादू है कि नहीं है ? तुम बोलते क्यों नहीं ।

देशल—सच्चा जादू तो सौन्दर्य ही है । काम रूप देश में सुन्दर थी लौना चमारी और सोरठ देश में सुन्दर है रानक कुम्हारी ।

राखङ्गार—इस तुकबन्दी पर खिलखिला कर हँस पड़ा । क्या तुम्हारी समझ में कुम्हार की लड़की को इतना सुन्दर नहीं होना चाहिये था ?

वेशल—हजूर ! आदमी से तो हर समय ग़लती हुआ करती है । ब्रह्मा से भी कभी २ भूल होती रहती है । यहाँ उसने भी धोखा खाया । क्यों देशल ! तुम क्या कहते हो ?

देशल—सच है ! ब्रह्मा आखिर मनुष्यों ही का तो आदि पिता है । यहां पर क्या है ? वह और २ मौक़ों पर भी ग़लती करता रहा है ।

राखङ्गार—मुस्कराया ! ब्रह्मा ने कहां २ ग़लती की ?

वेशल—हजूर सुनिये । मैं ब्रह्मा की ग़लती आपको सुनाता हूं । उसने सूर्य को गर्म बनाया । चन्द्रमा को रात के समय उदय

होने को नियत किया। चन्दन के वृक्ष से सर्प लिपटाये। गुलाब के दामन में काँटे अटकाये। सोने को बिना सुगन्ध का बनाया। पारे को चंचल बनाया। लक्ष्मी को घड़ियाल। दुर्गा को सिंह और सरस्वती को हंस की सवारियां दीं। विष्णू को सर्प के बिस्तर पर लिटाया। शिव को भभूत के ढेर पर सुलाया। बगुले को मछली खाना सिखाया। कोयल को काला रूप दिया। एक बात तो कोई कहे। वह तो रोज़ २ ऐसी ग़लतियां करता रहता है। क्यों देशल! सच है या झूँठ?

देशल—इसके सत्य होने में क्या शक है?

राखंगार—बहुत अच्छे रहे! क्या तुमको पसन्द नहीं है कि रानकदेवी कुम्हार के घर पैदा होती?

वेशल—पसन्द हो या न हो। वृह्मा हम से पूछ कर तो कोई कार्य नहीं करता। हम क्या कह सकते हैं? उसका काम है। वह जाने। क्यों देशल?

देशल—ठीक है।

राखंगार—रानकदेवी का सौन्दर्य पूर्ण और अद्भुत है।

वेशल—मगर हजूर! सौन्दर्य पूर्ण हुआ तो क्या हुआ। भाग तो पूर्ण नहीं है। कुम्हार का झोंपड़ा, नीच जाति, न कुछ माल असबाब, न विद्या न सभ्यता और फिर इस पर तुरी यह कि स्त्री! क्यों देशल! स्त्री के सम्बन्ध में तुम्हारी क्या सम्मति है?

देशल—बहुत खूब! स्त्री के बनाने में वृह्मा ने बड़ी ग़लती खाई। उसमें अपना कुछ नहीं। हर चीज़ औरों ही से मांगी हुई। चन्द्रमा का सा मुख, मृग के से नयन, चीते की सी कमर कबूतर की सी गरदन, कमल की डण्डी को तरह हाथ, बिजली जैसी नज़र, फूल का सा रंग, कोयल की कूक जैसी आवाज़, स्त्री संसार की माँगी हुई चीजों से बनी है। इसलिये उसमें कोई भी असलियत नहीं

है। तुम ही न देखो ! जब किसी का स्त्री की ज़रूरत होती है तो वह मांगे से ही मिलती है। इस मंगनी का नाम शास्त्रकारों ने कन्या दान रक्खा है खबर नहीं ब्रह्मा को इसके बनाने का ज़रूरत ही क्या थी ? यह तो संसार का असाध्य रोग है। जब देखो कैंची की तरह जुबान फट २ चलती रहती है। हर वस्तु को मनुष्य ताले में बंद कर सकता है। पर स्त्री की जिभ्या पर आज तक किसी ने नियन्त्रण नहीं लगाया। कभी वह खुश है कभी नाखुश है। अभी आंसू बहा रही है और शीघ्र ही उनको आंचल से पोंछती भी जाती है और मुस्कराती भी जाती है। इसकी किसी बात का विश्वास नहीं, ब्रह्मा ने स्त्री को बनाने में भारी भूल की। मेरी भी यह ही राय है।

राखंगार—खिल खिलाकर हँस पड़ा। खूब वेशल ! खूब ! तुम तो अच्छे कवि निकले कालीदास से भी ऊपर गये। स्त्री को तुम अनावश्यक समझते हो। लेकिन स्त्री न होती तो यह दुनियां कैसे पैदा होती ! इसलिये ब्रह्मा ने ग़लती नहीं की। तुम्हारी समझ बूझ का दोष है।

वेशल—नहीं भगवन् ! मेरा भाई सच कह रहा है। स्त्री असलियत से खाली है। पुरुष असल है और वह नक़ल। एक सत और दूसरी उसकी छाया। पुरुष सत्य है और स्त्री झूँठी मर्द खरा है औरत खोटी। खोटी चीज़ को कोई नहीं रखना चाहता। यह भ्रम और धोखा है। कष्ट क्लेश का घर है। ईश्वर इस बदबला से रक्षा करे। उपाधि का मूल दुख का कारण। द्वेष ईर्षा की जड़। मुझे तो इस स्त्री में एक भी गुण नहीं दिखाई देता। क्यों देशल मेरा ख्याल ठीक है कि नहीं ?

देशल—सोलह आना सही। बामन तोला पाव रत्ती सही। सौ में सौ हिस्से सही। इस स्त्री की बदौलत सोने की लंका खाक में मिल गई। इस स्त्री ने महा भारत कराकर तमाम राज घरानों

का सत्यानाश कर दिया। चद्रमा कहने को देवता है पर उसके गुरु बृहस्पति की स्त्री तारा ने उसको पथ भ्रष्ट कर दिया। वह खुद पति का घर छोड़ कर चन्द्रमा के घर रहने लगी। इन्द्र को अहल्या ने इस तरह मोह लिया कि उसे कपटी बनना पड़ा। इसी स्त्री ने शृङ्गी ऋषि के तप को भंग कर दिया। इसी ने विश्वामित्र को मेंनका के रूप में छला। कहां तक कहूँ। यह वह दुख दायनि है कि जिस के पास एक दो नहीं बल्कि पुरुषों के मारने के हज़ारों हथियार हैं। यह रोकर मारती है। हँस कर मारती है। आंख दिखाकर, भृकुटी की तिरछी चितवन करके, बोलकर, चुप रहकर मचल कर, गरदन मटका कर, उंगली दिखाकर, कहां तक कहूं यह पुरुषों को हज़ारों घातों से मारती रहती है।

रोय गाय हंस खेल कर हरत सबन के प्राण।
कहें कबीर या घात को समझें सन्त सुजान॥

श्री महाराज! जो आप कहते हैं कि स्त्री न होती तो यह दुनियाँ कैसे फैलती। इस विषय में मैं कहता हूं कि एक तो इस दुनियां के पैदा करने की ज़रूरत ही क्या थी। यह खुद ब्रह्मा की ग़लती थी। फिर ब्रह्मा जब स्त्री के पैदा करने की शक्ति रखता था। तो क्या और किसी अन्य युक्ति से रचना का सिलसिला नहीं चला सकता था। अधिक क्या कहें यह उसकी बड़ी भारी भूल है। स्त्री बनाकर ब्रह्मा ने घोर अपराध किया है। राखंगार ने देखा कि यदि वह कुछ और कहता है तो वेशल देशल पढ़े लिखे लोग हैं। यह बात का बतंगड़ बना देंगे। जिसका परिणाम कुछ भी न होगा इस कारण उसने अपने स्वभावाधीन मुस्कराकर कहा। तुम दोनों बड़े पंडित हो। मगर मैं एक बात पूछता हूँ। उसका उत्तर दो?

बेशल—आज्ञा दीजिये! हमारे दिल, जिभ्या, हाथ, पांव सब ही तो आपकी सेवा का दम भरते हैं क्यों देशल! है कि नहीं।

देशल—इसमें शक ही क्या है यह जीवन ही महाराज का

प्रदान किया हुआ है। एड़ी से लेकर चोटी तक महाराज का ही नमक तो भरा हुआ है।

राखंगार—तुम ऐसी चापलोसी की बातें न बनाओ। तुम मेरे भानजे हो। तुम्हारी जिभ्या से ऐसे शब्द शोभा नहीं देते ऐसी बातचीत छोड़ो। अब यह बताओ कि यदि किसी क्षत्री को रानक देवी ब्याह दी जाय तो इसमें कोई दोष तो नहीं है?

वेशल—नहीं। शास्त्र कहते हैं। धन, कन्या और विद्या यह तीन रत्न हैं। यह जहां से भी हाथ लगें अथवा यदि चान्डाल के घर में भी हों तो राजा उनको ले सकता है। इसमें कुछ दोष नहीं है। इसके अतिरिक्त ऊँचे कुल वाले सदैव से नीच कुल की कन्याओं को ब्याहते रहे हैं। यह नई बात नहीं है। क्यों देशल! क्या यह ग़लत है।

देशल—ग़लत नहीं बल्कि सत्य है। बानासुर राक्षस की बेटी को कृष्ण के पुत्र अनरुद्ध ने विवाहा था। जामवंती से जो जामवन्त रीछ की पुत्री थी खुद कृष्ण ने शादी की थी। नाग कन्या को इन्द्रजीत ने, और देव कन्या शकुन्तला को दुष्यन्त ने विवाहा था। आगे और सुनिये, यूनान वंश की राजकुमारी मगध देश के राजा के घर आई। नौशेरवाँ की पोती मेवाड़ के वंश में ब्याही गई। एक दो नहीं यहां सैकड़ों ही दृष्टान्त हैं। मनु महाराज ऐसा ही कहते हैं याज्ञवल्कि को भी यह ही सम्मति है। और पराशुर स्मृतियां भी इसकी विरोधी नहीं हैं। मगर यह नहीं मालूम कि महाराज ने किसको इस सुन्दरी के हाथ के योग्य समझा है।

राखंगार—कल यहां से कूच जूनागढ़ होगा पहुँच कर इस पर विचार किया जायगा।

❀ पहला भाग समाप्त ❀

द्वितीय भाग

छटा अध्याय

स्त्री

"स्त्री की परख करना सहज नहीं"

पाटन देश का राजा सिद्धराज जैसिंह सोलंकी अपने समय का बहुत बड़ा सूर वीर, साहसी और मन चला राजा हुआ है। तमाम गुजरात उसके नाम से कांपता था और बहुत से छोटे मोटे राजे उसको कर देते थे। उसका नाम गुरजरेश्वर अथवा गूजरों के विशाल देश का राजा पड़ गया था। सिद्ध राज में बहुत से गुण थे क्योंकि जब तक किसी व्यक्ति में निजी योग्यता न हो तब तक प्रकृति इस रचना में उसे महान और वैभव शाली बनने का अवसर नहीं देती। यह कभी न समझो कि हमारे उच्च अधिकारी सब अनसमझ और गंवार ही होते हैं। कोई न कोई उनमें विशेष योग्यता रहती है जिसके कारण वे मनुष्य समाज में सर्वश्रेष्ठ गति प्राप्त कर लेते हैं। हां यह सम्भव है कि उनमें कोई २ दोष भी हों। मगर यहां कौन व्यक्ति ऐसा है जो निर्दोष है। निर्दोष केवल एक ईश्वर का रूप है, वह इष्ट है, ध्येय है सर्वस्व है। उसमें निस्सन्देह कोई अवगुण नहीं होता। मानव शरीर में आना ही दोष का कारण है। शरीर का नाम ही अवगुणों से भरा और अपूर्ण है। शरीर बन्धन है, नाशवान है, बन्धन में आई हुई वस्तु सदा दोष युक्त होती है। शारीरिक अवस्था में या बन्धन में आये हुये प्राणी में, निर्दोषता की खोज करना नासमझी और नादानी है। हम गुरु को निर्दोष उसके शरीर की दृष्टि से नहीं कहते। बल्कि मानसिक इष्ट या ध्येय की दृष्टि से गुरु को पूर्ण बताते हैं। इसी प्रकार हिन्दू मूर्ति पूजक होकर मूर्ति को दोष से मुक्त नहीं समझते थे।

बल्कि उस मूर्ति को किसी पूर्ण रूप का प्रतीक मानकर उसकी पूजा करते थे। पत्थर की मूर्ति, धातु की मूर्ति, लकड़ी या मिट्टी की मूर्ति और फिर हाड़ माँस की मूर्ति, दोष युक्त क्यों न होगी? अल्पज्ञ या सीमित होने के दोष का तो उसका हाल का रूप ही स्वयं साक्षी देरहा है। हां, जिस इष्ट को दृष्टि में रखकर यह मूर्तियां पूजी जाती हैं वह निस्सन्देह दोष रहित श्रेष्ठ और पवित्र हैं, इसी कारण वेदों में प्रार्थनायें की गई हैं:—तू निर्दोष है हमको दोषों से मुक्ति दे। तू तेजस्वी है, हमको अन्धकार से प्रकाश की ओर लेचल। तू ज्ञान स्वरूप है हमको ज्ञान देकर अज्ञान के बंधन से मुक्त कर दे। तू अविनाशी है हम को काल चक्र से छुड़ाकर अविनाशी बना दे। आदि २।

सिद्धराज में भी एक घृणित अवगुण था। वह कामी था। विषय भोग और इन्द्रियों के वश में रहना, विषय वासना का अति निन्दित रूप है। मगर क्या किया जाय। यह स्वभाव मनुष्य का कई तरह से होजाता है। उत्तराधिकारी के नाते, माता पिता से बापोती में मिलता है। संग दोष के कारण मित्र, नाते रिश्तेदार, स्वाध्याय और निज अनुभव के आधीन हमारे जीवन का अंग बन जाता है। चिन्तन और मनन के आधीन यह हमारे अङ्ग प्रति अङ्ग में ओत प्रोत हो जाता है। ईश्वर सहायता करे तब इससे मुक्ति प्राप्त होती है। वरन यह एक ऐसा अवगुण है जो सब षट गुणों को आच्छादित कर देता है।

रात का समय था। सिद्धराज राज्य के काम काज से छुट्टी पाकर महल में बैठा हुआ था। उसके साथ अनेक सचिव, भाट मसखरे और कवि आदि भी थे। यह समय मनोरंजन और चित्त के प्रसन्न करने के लिये नियत था। ऐसा कौन व्यक्ति है जो दिन रात काम किया करे। कोई ऐसा भी तो समय हो जिसमें चित्त को उपराम और मन को शांति मिले।

सिद्धराज ने गाने वालों का राग सुना। मसखरे की फक्कड़ बाजी और हँसी दिल्लगी की ओर ध्यान दिया। इधर उधर की गप शप से भी कान भरे। मगर चित्त प्रसन्न न हुआ। उसने रनमल दसोंधी से सम्बोधन करते हुए कहा। कविराज! संसार में क्या वस्तु है जो सब से अधिक मनुष्य के मनोरंजन और प्रसन्नता का कारण होती है।

रनमल समझ गया कि राजा का चित्त किस ओर है। सेवक अपने स्वामी के दिल की किताब का हर समय पाठ किया करते हैं। जिस प्रकार छात्रों को अपनी पुस्तक के हर पन्ने के विषय का ध्यान रहता है उसी प्रकार कर्मचारियों की दृष्टि के सामने उनके स्वामी के मन की पुस्तक खुली रहती है। फिर राजा के दरबारियों का क्या कहना है? यह तो एक नज़र से उसके मनके भाव को ताड़ जाते हैं। रनमल ने कहा अन्न दाता! जब विश्वकर्मा को ध्यान आया कि मनुष्य के मनोरंजन के लिये कोई संगी बनाये तो उसने हर वस्तु के गुणों को निकाल कर उनकी माजून बनाई और उसे मनुष्य को दे दी। और वह वस्तु आदि से लेकर आज तक न केवल मनुष्य के मनोरंजन का कारण है बल्कि मनुष्य को वह इतनी प्रिय हो गई है कि उसके हेतु माता पिता, राज पाट लोक परलोक, सुख चैन, और ईश्वर की भक्ति तक को तिलांजली दे देता है। मगर उसे नहीं त्यागता।

सिद्धराज हंसा—कविराज जी! वह कौन सी ऐसी वस्तु है?

रनमल—महाराज! वह स्त्री है।

सिद्धराज—खिलखिलाकर हंस पड़ा। "अंधे को अंधेरे में बड़ी दूर की सूझी।" कविराज! यहां तो ग़लती कर रहे हो।

रनमल—भगवन! मैं सच्ची बात कह रहा हूँ। स्त्री मुस्कराते हुये जिस समय होट खोलती है। क्या आप नहीं देखते कि उसके दांत अनार के दानों के समान सुन्दर दीख पड़ते हैं।

उसका मुख समुद्र की सीप के समान है जिसके अन्दर चमकते हुये मोती बड़ी मनोहरता से अपनी चमक दमक का दृष्य दिखाते हैं। यह दांत क्या हैं? सूर्य लोक के सूर्य, चन्द्रमा और तारागण हैं सारी रचना इस दृष्टि से स्त्री के मुख में बंद है। जब वह बोलने लगती है उसके कंठ से जो कानों को प्रसन्न करने वाली वाणी निकलती है वह सामवेद की श्रुति है जो तेजस्वी लोकों के चलायमान होने से स्वयं ब्रह्मांड में गूंज जाती है। इसी से वायु की उत्पत्ति है जो दिल की छिपी हुई कली को खिला देती है। स्त्री के नेत्रों में अग्नि और बिजली भरी है जो अग्नि और इन्द्र देवता के वेग और ताप के समान है, उसके अनुरूप है। स्त्री को ज़रा आंख खोलने दीजिये। पुरुष का आलस्य उसके मन का मैल और स्वभाव की मलीनता दम के दम में मिट जाता है। इसी स्त्री का शरीर पृथ्वी मंडल है जिसकी गोद में संसार के सताये हुये लोगों को सुख चैन मिलता है। इस स्त्री को आपने समझा क्या है! यह पुरुष को अपने हाथों से भोजन खिलाकर बलवान बनाती है। यहाँ यह लक्ष्मी का काम करती है। यह पुरुष को बुद्धि विवेक की शिक्षा देकर विद्या बुद्धि की सूझ सुझाती है। इस जगह वह सरस्वती का रूप है। यह पुरुष को साहस देदे कर संसार के संग्राम में हाथ पैर मारने के योग्य बना देती है। यहां वह साक्षात पारवती और दुर्गा के समान है। इसी कारण शास्त्रों ने इसे अन्नदा अन्न देने वाली, बलदा बल देने वाली और बुद्धिदा बुद्धि देने वाली के नाम दिये हैं। यह शक्ति है और शक्ति भी महा बलवान है। कैसे सम्भव है कि पुरुषों को स्त्री के संग अपने शोक सन्ताप को मिटाने की सामग्री न मिले। उसके मुख में अमृत है यह केवल बातों ही बातों से एक मरे हुये पुरुष को जीवित कर देती है।

सिद्धराज फिर खिल खिलाकर हँस पड़ा। वाह! कविराज जी वाह! इस समय तो ऐसा प्रतीत हो रहा है कि मानो तुम्हारी

जिह्वा पर सरस्वती बोल रही है। रनमल–क्यों नहीं! स्त्री को मैंने अभी सरस्वति कहा है। यदि आवाहन मंत्री के उच्चारण करने से देवता यज्ञों के अवसर पर आजाते हैं तो कैसे मुमकिन है कि मैं सरस्वति के अनुरूप स्त्री का ध्यान करूँ और मेरा मन और वाणी उसके प्रभाव से शून्य रहें।

सिद्धराज—तब तो तुम सच्चे स्त्री भक्त हो।

रनमल! दुनियाँ में कौन पुरुष है जो स्त्री का भक्त नहीं है? ईश्वर भक्त तो मुझे यहाँ एक भी दृष्टि में नहीं आता। यहां सब ही स्त्री भक्त बने हुये हैं। क्या आप स्त्री भक्त नहीं हैं?

सिद्धराज—थोड़े समय के लिये चुप हो गया। फिर सोच समझ कर उत्तर दिया। नहीं कविराज जी! मैं स्त्री भक्त नहीं हूँ। मुझमें स्त्री की भक्ति नहीं आई। मैं तुमसे सत्य कहता हूं इसमें तनिक भी झूँठ नहीं है।

रनमल—मैं आपका विश्वास करता हूँ।

सिद्धराज हँसा! फिर तुम्हारी बात मिथ्या हो गई। तुमने अभी कहा था कि संसार में सभी स्त्री भक्त हैं और मैं ऐसा नहीं हूं।

रनमल—तब इस दशा में मैं यह कहूंगा कि आपने किसी स्त्री का अब तक दर्शन ही नहीं किया है।

सिद्धराज—यह और भी विचित्र बात है। मेरे महल में सैकड़ों स्त्रियाँ हैं और तुम कहते हो मैंने एक स्त्री भी नहीं देखी।

रनमल—मैं मिथ्या नहीं कहता हूँ। यदि आपको एक स्त्री भी मिली होती तो आप ऐसा कदापि न कहते। जिनको आपने देखा है चाहे वे स्त्री हैं पर वे आपके स्वभाव और मन की स्त्रियां नहीं हैं। जब तक असली औरत हाथ न आये तब तक किसी को

जीवन का सुख भी नहीं मिलता और न स्त्री की महिमा का प्रभाव मन पर पड़ता है।

सिद्धराज—असली स्त्री क्या होती है ?

रनमल—सुनिये महाराज ! कूका पण्डित ने अपने शास्त्र में पांच प्रकार की स्त्रियां बताई हैं। पद्मिनी, चतुरनी, शंखनी हस्तनी, डंकनी। इनमें से असली औरत पद्मिनी है। शेष सब नक़ली समझो।

सिद्धराज—इनमें से एक एक के गुण भी वर्णन करो। जिससे मैं यह समझूँ कि कोई असली स्त्री मेरी दृष्टि में आई है या नहीं ?

रनमल—पद्मिनी के मुख की क्रांति कमल के समान खिली होती है। जिसके रङ्ग में परिवर्तन नहीं होता। होठ पतले मगर गुलाबी लाल आंखें मतवाली, शरीर और सिर से एक विशेष प्रकार की सुगन्ध उड़ती है। सदा चारिणी पतिव्रता, अन्य पुरुषों से उदासीन, निर्भय, दिखावें से दूर रहने वाली। इस प्रकार की स्त्री में एक तरह की सूक्ष्मता, होती है जो दैवी सृष्टि से सम्बन्धित है। ऐसी स्त्रियां सती होती हैं जो पुरुष के शव के साथ प्रसन्नता पूर्वक मरती हैं। चतुरनी का दरजा इससे उतर कर है। वह भी सुन्दर होती है। मगर समय २ पर उसके मुख की क्रांति में परिवर्तन हो जाया करता है। होट इसके भी पतले होते हैं। यह सुख चैन वस्त्र, आभूषण, इतर आदि सुगन्धित वस्तुओं की लालसा रखती है। कभी २ आंखों में बल डालकर, होठ की कड़क और हाथ की उंगलियों से संकेत करके बात चीत करती है। यह स्वभाव की उसी सीमा तक दृढ़ रहती है जहां तक लज्जा और सकुच इसको विवश करते हैं। इसके सिर के बालों से सुगन्धि नहीं निकलती। हाँ, यह इत्र और फुलेल में बसी रहना चाहती है। स्त्रियों की तीसरी क़िस्म शंखनी कहलाती है।

इसका मुख शंख के समान खुला या बन्द और उसी तरह की वाणी बोलती है। कभी २ अच्छे कंठ की होती है, मगर उस आवाज़ में कुछ भारीपन, रहता है। इसका रूप कभी २ अति सूक्ष्म अथवा सुन्दर होता है। पर इसका मन अति चंचल होता है, और समय समय पर धर्म कर्म को धूल के समान भी नहीं समझती। जैसा संग मिल गया उसी के अनुकूल बन गई। मगर इसके सिर को सूंघो तो बालों से दुर्गन्धि उड़ती हुई प्रतीत होगी। इसको गाने बजाने का बड़ा चाव होता है। और ऐसे ही पुरुषों के संग को पसन्द करती है। यह धोखेबाज़ होती है। माता पिता के साथ कभी सचाई और सफ़ाई का बर्ताव नहीं करती बल्कि इस प्रकार का रूप बनाये रहती है कि वे उसे नितान्त दूध पीने वाला बालक समझें और यह छल कपट करने में भी दोष नहीं समझती। चौथे प्रकार की स्त्री हस्तनी है। जिसके होठ मोटे होते हैं। बाहरी दृष्टि से लज्जावाली, अपने को कुछ समझती है। भीतरी तौर पर व्यवहार भ्रष्ट और आज्ञा पालन न करने वाली, कुछ कुछ इसकी भौयें मिली जुली होती हैं, मगर यह ज़रूरी नहीं है। यह मोटी होती है। पेट निकला हुआ, हाथ पांव बेडोल, पति के ऊपर प्रबल अंकुश रखने वाली। रुपया, वस्त्र आभूषण और संसारी वस्तुओं को धर्म से अधिक प्यार करने वाली। यह पुरुष को इस प्रकार यंत्रण में रखती है कि वह दिल डोल नहीं सकता। पद्मिनी का पति तो बादशाह होता है। चतुरनी के पति भी इस दृष्टि से अधिक सुखी रहता है। शंखनी के पति को आधीनता और सुख दोनों ही साधारण होते हैं। हस्तनी का पति जीवन पर्यन्त स्त्री का पुजारी, उसका चेला, और ज़र ख़रीद ग़ुलाम बना रहता है। हस्तनी स्वभाव की गहरी, गम्भीर होती है। पुरुष की मार धाड़ और कठोर व्यवहार को सहन करती हुई भी उसको अपने पंजे से बाहर नहीं जाने देती। यह महा नीच

स्वभाव की होती है। धोखा देने वाली और चालाक होती है। इसका धर्म कर्म नितान्त दिखावटी होता है। उसमें सार वस्तु का नाम भी नहीं होता। पाँचवीं स्त्री डंकनी होती है। यह पद्मिनी स्त्री से नितान्त उलटी है। उसमें यदि सद गुण हैं तो इसमें वह गुण होते हैं जो सद भावों के बिल्कुल विरोधी हैं।

सिद्धराज—तुम्हारे इस कथन का सारांश यह है कि पद्मिनी स्त्री सर्व श्रेष्ठ है। मैं इसको अब तक भ्रम ही समझता रहा निश्चय ही मैं मानता हूं कि इस प्रकार की स्त्री मेरी दृष्टि में नहीं आई।

रनमल—यही कारण है कि आपको जीवन का असली सुख भोगने को नहीं प्राप्त होता। यदि पद्मिनी किसी के घर में होती है तो न तो उसकी मनोरंजन की तलाश होती है, न वह व्याकुल और चिंतित ही होता है। उस प्रकार की स्त्री बड़े भाग्य से प्राप्त होती है और यदि पुरुष फ़क़ीर भी हो तो वह अपने आप को बादशाह से अधिक भाग्य शाली समझता है।

सातवाँ अध्याय

पद्मिनी

"नेक स्त्री हज़ार नियामत है"।

सिद्धराज—रनमलदसौंधी ! तुमने पद्मिनी की बड़ी प्रशंसा की और इस प्रशंसा को अलंकार की सीमा तक पहुंचा दिया यह कैसे सम्भव है कि विरोधी संस्कार और प्रभावों की उपस्थिति में भी इस प्रकार की स्त्री, पुरुष के सुख और चैन का हेतु बनी रहे। ऐसे समय में तो स्त्री और भी कष्ट क्लेश का कारण अथवा बवाल जान बन जाया करती है।

रनमल—राजन ! आप इस प्रकार की बात चीत कर रहे हैं जिसका कोई भी उत्तर नहीं दिया जा सकता। संसार स्वयं कष्ट

क्लेश का स्थान है। यहां राजा प्रजा कोई भी यथार्थ में पूर्ण रूप में सुखी नहीं रह सकता। हां जहाँ तक संसार के अपूर्ण सुख का सम्बन्ध है उसकी प्राप्त में पदमिनी सहायक होती है। सम्भव है कि वह प्रयत्न भी न करे मगर उसकी उपस्थिति अपने निज प्रभाव से ख़ाली नहीं रहती। अथवा उसमें यह गुण स्वयं होता है।

सिद्धराज—किस तरह ?

रनमल—जिस तरह गुप अँधेरे में एक टिम टिमाता हुआ दीपक अच्छा प्रकाश देने की वस्तु प्रतीत होता है। जिस प्रकार डूबने वाला एक लकड़ी का सहारा पाकर पानी में डूबने से बच जाता है। उसी तरह भाग्यशाली पुरुष कष्ट क्लेश में भी पदमिनी स्त्री के निकट तथा सङ्ग और प्रताप से अपने दुख के भार को सदैव हलका अनुभव करता रहता है।

सिद्धराज—मैं कैसे मानूँ कि यह बात यथार्थ है। मानलो मैं राजा हूं। प्रजा, ख़ज़ाना, देश का प्रबन्ध, सैना व दरबार आदि की अनेक प्रकार की हज़ारों विरोधो और अनुकूल दशायें वर्तमान रहती हैं। यदि पदिमिनी स्त्री मिल भी गई तो सब बातों में उसका अभाव कैसे हो सकेगा।

रनमल—जैसे एक घड़े पानी के अन्दर केवल दो चार बूंद गुलाब की पड़ जाने से वह जल सुगन्धित हो जाता है। वैसे ही पदमिनी का गुप्त प्रभाव मनुष्य के जीवन की हर अवस्था में फैल जाता है। पद-मिनी प्रकृति की स्त्री अति सूक्ष्म स्वभाव की होती है। सूक्ष्म वस्तु विशाल शक्तिशाली मानी जाती है। वह पुरुष के मन को अपनी बैठक बना लेती है और मानसिक रीति से वहां बैठी हुई उसके हर कार्य को विशाल, सुन्दर, और मनोहर बना देती है। पदमिनी का पति अधिक शूर वीर, अधिक न्यायी, अधिक काम करने वाला, अधिक सर्व प्रिय और अधिक सुखी हो सकता है। क्योंकि सद्गुण वाली

कुछ बनाता रहता है।

सिद्धराज—तुम्हारे कथन से यह सिद्ध होता है कि पद्मिनी अपने पति को सर्व अंग से अपनी ओर खींच लेती है और पुरुष को सिवाय उसके ध्यान के और कोई काम नहीं रहता। फिर तो वह पुरुष को स्त्री का पुजारी बनाने वाली हो गई।

रनमल—यही तो बात है जिसकी समझ कम लोगों को है। पद्मिनी का सम्बन्ध पुरुष के कंठ में चमेली का हार है जो सुगन्धि और शीतलता देता रहता है। और साथ ही कंठ को भार नहीं प्रतीत होता। यह स्त्री द्वेष और ईर्षा रहित होती है। चूंकि उसके मन में स्वाभाविक रूप से द्वेष नहीं होता। उसका पति स्वतंत्र रहता हुआ उसका प्रेमी बना रहता है और उसका चित्त दूसरी ओर चलायमान नहीं होता। आनन्द और मनोरंजन की सब सामग्री की कमी को पद्मिनी का मनो भाव पूरा करता रहता है।

सिद्धराज—ओहो रनमल! या तो तुम इस समय ऐसी बात कर रहे हो जो नितांत मानसिक है और उस दृष्टि से सत्य है अथवा तुम को स्त्री जगत का अभी तक अनुभव नहीं हुआ है। मेरी दृष्टि में आज तक ऐसी स्त्री नहीं आई चित में इच्छा रहती है कि राज काज के दुख दाई कष्ट और कलेशों से मुक्त होकर किसी सहानुभूति रखने वाले प्राणी के साथ दो घड़ी को चित्त की व्याकुलता को मिटाकर प्रसन्न हूँ। मगर मुझे आज तक तो ऐसा अवसर और ऐसा सहानुभूति रखने वाला नहीं मिला। भविष्य का हाल ईश्वर जाने।

रनमल—तब ही तो आपको मेरी बात के सत्य होने में शंका है। यदि आपने अपने किसी दरबारी या कर्मचारी के यहां भी ऐसी स्त्री देखी होती तो भूल कर भी शंका न करते।

सिद्धराज—क्या साधारण पुरुषों को भी पद्मिनी स्त्री मिल जाती है?

रनमल—क्यों कहीं ! बल्कि ऐसी स्त्री का प्रगट होना कभी २ ग़रीबों के घर में भी हुआ करता है। भाग्य की दैन केवल राजा या बड़े आदमियों ही तक सीमित नहीं है। सब के लिये समान है।

सिद्धराज—रनमल ! सच सच कहना तुमने स्वयं कभी ऐसी स्त्री अपनी आँखों से देखी भी है ? या बातें बना रहे हो।

रनमल—हाँ, हुजूर मैंने देखी है। पदमिनी स्त्री कपोल कल्पित, मन गढ़त किस्से कहानी का विषय नहीं है। वह साक्षात् होती है। हाँ चूँकि वह प्रगट रूप में दीखती नहीं है, इस कारण वह सर्व साधारण की दृष्टि में नहीं आती वह जिसके भाग्य में बदी है उसी के जीवन को सुफल बनाने को नियत है।

सिद्धराज–यदि तुमने देखा है तो मुझे भी दिखाओ ? अथवा ऐसी युक्ति से काम लो कि किसी प्रकार पदमिनी स्त्री मेरे राजग्रह में आजाय।

रनमल ने दो चार मिनट के लिये चुप्पी साध ली। उसकी स्त्री स्वयं अति धर्मनिष्ट और सदाचारणी थी। लेकिन यह सिद्धराज से कैसे कहता। इसके अतिरिक्त इस प्रकार की बातों से मनुष्य को कष्ट कलेश भोगने का अवसर भी आ सकता है। कौन जाने किसकी प्रकृति किस प्रकार की हो। उसने उत्तर दिया। श्री महाराज ! दिखाने को तो मैं दिखा दूंगा। पर आपको प्रतीत कैसे होगी, सम्भव है आपको परीक्षा करने का विचार पैदा हो। और वह परीक्षा एक विकट रूप धारण करके घोर संकट सिद्ध हो।

सिद्धराज—यदि ऐसा विचार है तो फिर किसी कारी पदमिनी लड़की की खोज करो। क्या तुमने ऐसी लड़की देखी है ?

रनमल—हां अन्नदाता ! देखी है।

सिद्धराज—कहाँ देखी ?

रनमल—इसी गुजरात के सोरठ देश में मजीवड़ी नाम का

एक गाँव है। घूमते फिरते मैं वहाँ जा निकला। एक कुम्हार वहाँ रहता है। उसकी लड़की पद्मिनी है।

सिद्धराज—कुम्हार के घर में पद्मिनी लड़की पैदा हो, यह आश्चर्य है।

रनमल—इसमें आश्चर्य क्या है! परमात्मा जो चाहे वह करे! यदि सांप के मुख में मणि (लाल) और हाथी के मुख में गज मुक्ता (मोती) और मेंढक के सिर में जहर मोहरा पैदा होता है और हो सकता है तो किसी छोटे मोटे आदमी के घर में पद्मिनी का पैदा होना क्या ताज्जुब की बात है। इस संसार में हर जगह विपरीति बातों का होना सम्भव है। जब राक्षसों के घर में प्रहलाद जैसा भक्त, बली जैसा दानी और रावण जैसा पंडित पैदा हो गया तो अभागे कुम्हार ने क्या अपराध किया कि उसके घर में पद्मिनी न पैदा हो। वह स्वयं ही बड़ा धर्मात्मा और सदाचारी मनुष्य है।

सिद्धराज—बात तो ठीक है। पर पाटन देश का राजा और कुम्हार की लड़की से विवाह करे! संसार क्या कहेगा।

यह बात सुनकर रनमल के होटों पर दबी हुई मुस्कराहट के चिन्ह दीख पड़े। सिद्धराज की उस पर दृष्टि गई। यह कांप गया सिद्धराज अत्याचारी राजा था। उसने पूछा! तुम मुस्कराते क्यों हो? रनमल हाज़िर जवाब था। बोला! मुझे एक ओर तो उस कुम्हार की लड़की के भाग्य पर दूसरे शास्त्रों के लिखने वालों पर क्योंकि वह लिख गये हैं कि द्विज शूद्रों की लड़कियों को जब चाहें ब्याह सकते हैं। मगर एक भी ब्राह्मण, क्षत्री और वैश्य ऐसा नहीं है जो इस नियम का पालन करता हो। तीसरे मुझे इस वजह से हँसी आई कि आप राजा हैं। आपको भी इस रत्न के लेने में, भ्रम वश संकोच हुआ। राजा सब कुछ कर सकता है। मगर इसको भी रीति रस्म के आधीन रहना पड़ता है। उनको मानना पड़ता है।

सिद्धराज—तुमने सत्य कहा। तुम्हारा हँसना यथार्थ है। राजा को संसार में स्वतंत्रता कहां है! इसे अपने पुत्र, पुत्रियों के विवाह में सर्व साधारण की रुचि,देश के हानि लाभ, और सचिव मंत्री आदि का परामर्श लेना पड़ता है। इस विषय में तो साधारण ग़रीब हैसियत के लोग ही अधिक स्वतंत्र हैं। मैं इसको मानता हूँ। पर तुम्हारी क्या सम्मति है?

रनमल—अन्न दाता! मेरी सम्मति क्या है? कुछ नहीं। जो आपका आयषु होगा मैं उसका पालन करूँगा। जिस प्रकार मन इन्द्रियों से जो काम लेना चाहता है वही ले लेता है किसी को कुछ संकोच नहीं होता। आप भी उसी के समान हैं। आप गुजरात देश के मन हो। गुजरात शरीर है। और आपकी प्रजा जिसमें भाट, दसोंधी, हारोट आदि २ सब ही हैं। हाथ पांव और इन्द्रियों के समान हैं। आपकी जो आज्ञा हो उसका पालन करूँ।

सिद्धराज–मैंने विचार कर लिया। तुम जाओ फिर दुबारा उस लड़की को देख आओ। यदि उसका विवाह नहीं हुआ है अथवा उस कुम्हार ने अब तक किसी के साथ उसकी मँगनी नहीं की है तो तुम उसे समझा बुझा कर मेरे साथ विवाह करने को राज़ी करलो। और जब वह राज़ी हो जाय तो फिर मैं स्वयं भेष बदल कर वहां चलूंगा और लड़की को लड़की के पिता के संग पाटन नगर में लाऊँगा। सोरठ देश का राजा राखंगार है। जब तक कुम्हार स्वयं यहाँ न आजाय मैं विवाह के लिये उसे विवश न करूंगा। कौन जाने इसका परिणाम क्या हो। तुम निःसंकोच अपने ढङ्ग से जिस प्रकार चाहो इस समस्या को निबटा लो?

रनमल—सत वचन! जो आपकी आज्ञा।

आठवां अध्याय

प्रयत्न (कोशिश)

"होगा जो क़िस्मत में बदा, काम करना शर्त है"।

रनमल पाटन नगर से चला। उसके संग चार और भाट थे। जिनको लोग लाल, भंगर चुंच और डबल कहते थे। कई दिन के बाद यह मजीबड़ी में पहुँचे, किसी धर्मशाला में ठहरे। हड़मति चाहे जाति का कुम्हार था पर दूसरे राजा की प्रजा था। उस पर कठोरता का व्यवहार नहीं किया जा सकता था। भाटों ने आपस में निर्णय किया। वहां के सेठ करमचंद टेकचंद और साधू कृष्णदास को अपना सहायक बनाया। सेठ की एक कोठी पाटन नगर में भी थी। वह सहज में ही इनका सहायक होगया। कृष्णदास से हड़मति को प्रेम और विश्वास था उसने भी समझा कि इनका साथ देने में कोई हानि नहीं है। और जब सबने हड़मति से भले प्रकार मेल मिलाप पैदा कर लिया तो फिर सिद्धराज की इच्छा प्रगट करने का साहस हुआ।

मनुष्य के कोई काम एक साथ नहीं होते। पहले विचार होता है। विचार अपने साथ सामग्री लाता है। साथी और सहायक पैदा हो जाते हैं और यह सब मिल मिला कर काम करते हैं। शरीक़ हो जाते हैं। यदि विचार दृढ़ है तो वह काम बन जाता है और यदि उसमें किसी कारण हीनता और निर्बलता है तो वह सफल नहीं होता बल्कि ख़राबी और हानि का कारण बन जाता है। मनुष्य जो कार्य करना चाहे उसके करने से पूथम सोच ले कि उस कर्म का परिणाम लज्जा, भय या झूंठ पर निर्भर तो नहीं है। केवल यह ही तीन बातें ध्यान देने योग्य हैं। यह ही वास्तव में पाप हैं। जिनमें यह तीन न होंगी उसमें सिंहवत् गुण होंगे और जिसमें यह होंगी वह छलिया और कपटी होगा। और

उसका कार्य न केवल उसके लिये बल्कि औरों के लिये भी लज्जा-जनक और दुख का कारण होगा।

पांच भाट, सेठ और साधू को लिये हुए हड़मति के घर पहुँचे, उसने इनका आदर और सनमान किया और बैठने को आसन दिया।

समय पाकर साधु कृष्णदास ने कहा–हड़मति तुम्हारी लड़की रानक देवी स्यानी हो गई है। अब इसकी शादी करदो।

हड़मति—भगवन मुझे खुद चिंता है। मगर क्या करूं! कोई वर नहीं मिलता।

कृष्णदास—तुम को याद होगा। मैंने कहा था कि रानक देवी बड़ी बड़ भागिनि है।

हड़मति—आपकी बात मुझे याद है। और मैं आपके बचनों में विश्वास भी रखता हूँ। लेकिन ज्योतिषियों ने इसको अभागिनि भी बताया है।

कृष्णदास—वह जोतिषी कौन हैं? मैं भी तो सुनूं।

हड़मति—चुप हो गया। जी में आया कि रानक का पूरा २ हाल सुना दे। मगर संभल गया। बात टाल दी बोला मेरे देश के जोतिषी ने कहा था।

कृष्णदास—जोतिषी की बातों को रहने दो यह बताओ कि यदि कोई अच्छा वर मिले तो तुम अपनी कन्या का विवाह शीघ्र ही करदोगे या नहीं?

हड़मति—अन्धा क्या चाहे दो आंखें। विवाह तो उसका अवश्य ही होना है। कन्या माता पिता के घर कहां रही है। कन्या, नदी, बादल मोती, हीरे आदि यह सब पैदा कहीं होते हैं और कहीं अपना चमत्कार दिखाते हैं। शास्त्र ऐसा कहते हैं। इसको मेरे घर तो रहना नहीं है। पर मैं जल्दी न करूंगा।

कृष्णदास—तुम बुद्धिमान मनुष्य हो। तुमने इस समय

क्या अच्छी बात कही है। जो किसी मन चले कवि की जिभ्या से और भी सुन्दर मालूम होती। कुछ सेठ करमचंद को इसका अर्थ तो समझा दो!

हड़मति—हंसा। महाराज नदी पहाड़ से निकलती है। पहाड़ ही उसका माता पिता है। पर वह पिता के कुल को त्याग कर हज़ारों मीलों की दूरी से बहती हुई अपने आप को बड़ी चौड़ी गहरी और अधिक विस्तृत बनाकर सागर की छाती में जाकर समा जाती है। और अपना नाम निशान सब कुछ मिटा-कर इस प्रकार सागर से मिल जाती है कि फिर ढूंढे भी उसका पता नहीं चलता इसी प्रकार भगवन! लड़की माता पिता के घर पैदा होने को तो होती है मगर स्यानी होकर, दान दहेज ले देकर अपने पति के घर चली जाती है और वहां अपना पिछला नाम निशान मेट देती है। कोई उसका नाम नहीं लेता। उसका पति भी जब उसे बुलावेगा। ऐ! हो! या बेटे की माता कह कर पुकारेगा। सार ससुर भी फलाने की बहू और फलाने की माता कह कर पुकारेंगे। और फिर और २ भी।

कृष्णदास—वाह हड़मति! तुमने क्या अच्छी बात कही है। इसी प्रकार भक्त जन भी मालिक का नाम लेते हुए अपने नाम को नहीं चाहते और उसी का गीत गाते हुए अपने आपको मैंट देते हैं। क्या मन भाने वाली उपमा दी है। और बादल से कन्या की क्या समानता है?

हड़मति—भगवन! बादल समुद्र से उत्पन्न होते हैं। भाप बन कर ऊपर उड़ते हैं। वायु उनको उड़ा ले जाती है। देश २ में उनसे वर्षा होती है जो पृथ्वी में समा कर हर प्रकार के वृक्ष, अन्न, फल फूल सब ही उत्पन्न करके पृथ्वी को हरा भरा बना देते हैं। इसी प्रकार कन्या माता पिता के घर में जन्म ले कर दूसरी जगह पति से ब्याही जाती है। और उसके हृदय में अपना स्थान बनाकर

उनको संतान वाला प्रतिष्ठा वाला और शक्ति वाला बनाती है।

कृष्णदास—वाह भाई वाह ! भली बात कही ! भक्त जन भी तो ऐसा ही करते हैं। मनुष्यों के कुल में पैदा हो कर और गुरु के कुल में मिलकर ईश्वर परायण हो जाते हैं। मानो ईश्वर के संग उनका विवाह होता है और वह कन्या के समान अपने अस्तित्व को मेंट कर दया, धर्म और सदाचार का जल इस संसार में वर्षाते हैं। संसार सुन्दर बन जाता है। यदि भक्त न हो तो यह संसार महा कुरूप और बड़ा दुखदाई होता। भक्तों से यहाँ शांति आती है। और उनको देख कर संसारी भी बुरे भले रूप में सदाचारी बन जाते हैं। मोती से कन्या की कैसी उपमा है ?

हड़मति—मोती सीप के मुख में पैदा होता है। सागर की तली में न कोई उसे देखता है और न उसका मान होता है। लेकिन जब वही मोती बाहर निकलता है तो जौहरियों के हाथ से वह बादशाहों तक पहुँच कर उनके ताज का चमकदार मोती कहलाता है।

कृष्णदास वाह जी वाह ! यही दशा भक्त की भी है अपने घर या देश में उसे कोई नहीं पूछता। जैसी कहावत है कि "घर का जोगी जोगना, आन गांव का सिद्ध"। मगर आन गांव के लोग उसका आदर सम्मान करते हैं।

कृष्णदास और कुछ कहने ही को था कि सेठ करमचन्द टेकचन्द ने रनमल से कहा। कहां रामर कहां टें टें ! आये थे किसी और काम के लिये साधू ने राम रौला मचा दिया। यदि यह हाल रहा तो फिर महीनों बीत जायेंगे। बात चीत क्या होगी।

कृष्णदास और हड़मति को अच्छा नहीं लगा। पर दोनों चुप हो गये। रनमल अवकाश पाकर बोल उठा। हड़मति और कृष्णदास दोनों ईश्वर के भक्त हैं। जैसा जिनका बिचार होता है उनको वही सूझता है। इनकी वार्तालाप तो बड़ी अच्छी है। पर

साधूजी हड़मति से मुख्य बात का तो निर्णय कर लीजिये। रनमल के आखिरी शब्दों को सुनकर हड़मति चैतन्य हो गया। क्यों कि उसे ख़बर नहीं थी कि किसी विशेष उद्देश्य से यह उससे मिलने आये हैं। पर उसने कुछ नहीं कहा।

कृष्णदास—हां हड़मति! तुमने कहा था कि कन्या का विवाह मैं जल्दी न करूँगा इसका क्या सारांश है?

हड़मति—जल्दी का काम शैतान का होता है। जब तक मनुष्य भले प्रकार सोच समझ न ले तब तक कभी कोई कार्य न करे। वरन् कार्य का कार्य बिगड़ेगा और लोक हँसाई होगी। तीन समस्यायें हैं जिनका विचार कर लेना आवश्यक है। सबसे प्रथम वर है, फिर घर है, फिर कुल है, इनके पीछे फिर यह देखना उचित है कि लड़की भी विवाह से प्रसन्न रहेगी या नहीं। और जब सब बातों की ओर से संतोष हो जाय तब विवाह करने में कोई आपत्ति नहीं है।

कृष्णदास—वर अच्छा, घर अच्छा, कुल अच्छा, सब ही अच्छा है। यदि तुम इन सब बातों की ओर से संतुष्ट हो जाओ तब तो कोई शंका न करोगे।

हड़मति—मेरी आखिरी बात रह गई। जब तक मुझे विश्वास न हो जाय कि कन्या प्रसन्न रहेगी तब तक मैं विवाह करने का साहस न करूँगा।

कृष्णदास—हां इस ओर से भी संतोष है। तब तो तुमको कुछ आपत्ति न होगी।

हड़मति—कहिये ऐसा वर आपने कहाँ तलाश किया है? मैं सुन लूँ तब आपको उत्तर दूँ।

कृष्णदास—वर जाति का क्षत्री है। बहुत धन दौलत और मान प्रतिष्ठा वाला है।

हड़मति—रनमल जी! मगर आप जानते हैं ब्याह सगाई

और सम्बन्ध सब बराबर वालों ही में अच्छे होते हैं। छोटों के साथ नाता जोड़ने से बड़ों का भी अपमान होता है। और बड़े व छोटे दोनों ही सर्व साधारण की दृष्टि से उतर जाते हैं। पतित हो जाते हैं।

रनमल—ऐसा न समझो। बड़ों के सम्बन्ध से छोटों का मान होता है। और बड़ों का यश बढ़ता है।

हड़मति—मैं आपकी बात से कैसे असहमत हूँ! मैंने किसी छोटे वृक्ष को बड़े वृक्ष के नीचे हरा भरा या पनपता हुआ नहीं देखा। और न बड़े वृक्ष को छोटे वृक्ष को सहायता देते हुये पाया। इसी के समान मनुष्यों की भी दशा है।

रनमल—चन्दन से मिल कर अरंड के वृक्ष में भी सुगन्धि आजाती है। यह तुमने सुना ही होगा।

हड़मति—सुनने को तो मैंने सुना ज़रूर है। मगर इसका परिचय नहीं मिला। अनुभव नहीं हुआ। कौन जाने यह, कवियों की कल्पना हो, अलंकार हो। मगर रनमल जो यह आप जानते हैं कि यदि नीच जाति का पुरुष ऊंच जाति की स्त्री ब्याह लावे तो वह ग़रीब न तो इधर का रहा न उधर का रहा। ऊंचे कुल वाले तो उसे कदापि अपने सामाजिक चलन में सम्मिलित न करेंगे और अपनी बिरादरी में वह पुरानी कहावत के अनुसार नीले गीदड़ के समान माना जायगा और यदि बड़े कुल का मनुष्य नीच जाति की स्त्री घर में डाल ले तो वह अपने समाज वालों की दृष्टि में कांटे के समान खटकेगा। और उस ग़रीब स्त्री को ऊँचे कुल की स्त्रियां घृणा की दृष्टि से देखेंगी। यह सारांश है।

हड़मति—मगर मैं तो क्षत्री नहीं हूं। कोई क्षत्री कुम्हार की कन्या कैसे ब्याहेगा। उसको जाति बिरादरी क्या कहेगी। मुझे भी तो अपनी जाति बिरादरी का ख्याल है।

हड़मति के अन्तिम शब्दों की गर्मी ने सेठ करमचंद टेकचंद के चित्त के पारे को सीमा से ऊपर चढ़ा दिया। उससे न रहा गया। संयम करने का स्वभाव हर व्यक्ति का नहीं होता उसने नाक भौं चढ़ा कर कहा। हड़मति ! तेरी बुद्धि भ्रष्ट हो गई है। तू अपनी जाति का ख्याल नहीं करता। देख यह पांच आदमी पाटन नगर से आये हैं। और इसी टटोह में आये हैं।

हड़मति हंसा—सेठ जी ! आप बुरा क्यों मान गये। मैं इन लोगों से मिल चुका हूं। यह महाराज सिद्धराज के भाट हैं, हां, वह भले प्रकार से नहीं जानता था कि यह मेरी कन्या के सम्बन्ध में बातचीत करने आये हैं। खैर ! अच्छा हुआ जो आपने बता दिया। मैं लड़की का पिता हूँ। यदि इस प्रकार ठौर ठिकाने की बात करता हूं तो बुरा क्या करता हूँ। राजा प्रजा सब ही अपनी कन्या के सुख चैन को देखते हैं। आप क्यों क्रुद्ध होगये।

रनमल—हड़मति ! सुनो ? सेठ जी नाराज़ नहीं हैं। तुम इस नगर के रहने वाले हो इनका स्वभाव जानते हो। यह बड़े उतावले हैं। इनकी इच्छा यह थी किसी प्रकार यह मामला जल्दी तै हो जाय। इन्होंने तुम्हें बता दिया कि मैं तुम्हारी लड़की के सम्बन्ध में बातचीत करने आया हूँ। इस कारण अब मुझे बात-चीत करने का साहस होता है।

हड़मति—कविराज जी ! आप जानते हैं कि मैं कंगाल आदमी हूँ। एक तो कंगाल, दूसरे नीच जाति में पैदा हुआ हूं। हम ग़रीबों को पूछता कौन है ? यह कुछ मालिक की कृपा ही है जो आप यहां पधारे हैं। क्या आप किसी कुम्हार का संदेश लाये हैं ?

रनमल—महात्मा जी ने तुमको कह दिया है कि तुम्हारी लड़की का इच्छुक एक राजपूत है।

हड़मति–इस प्रकार का सम्बन्ध दोनों ओर को हानिकारक है। यह ही अच्छा है कि बड़े लोग बड़ों के साथ नाता करें और छोटे अपनी बिरादरी वालों के संग सम्बन्ध रक्खें। मैं नहीं समझता कि कोई बड़े मान प्रतिष्ठा का मनुष्य मेरी कन्या को विवाह कर सुखी होगा। एक तो कन्या का जीवन ही कष्ट क्लेश का जीवन बन जायगा। और फिर मेरी ओर व्यर्थ में उँगली उठाई जायगी। मान बढ़ाई मिलना तो एक ओर रहा।

रनमल—बातें तो तुम अनुभव की करते हो। परन्तु संसार में हर जगह और हर अवकाश पर समान दशा नहीं होती जिस समय तुम सुन लोगे कि तुम्हारी कन्या का इच्छुक कौन है और किस अभिप्राय से विवाह करना चाहता है तो मुझे आशा है तुम इन्कार न कर सकोगे।

हड़मति—मेरे सहमत होने और असहमत होने के सम्बन्ध में आपकी सम्मति समयानुकूल नहीं है। आपको शायद यह नहीं मालूम है कि मैं एक नियमानुसार कर्म करने वाला मनुष्य हूँ। मुझे संसार के द्रव्य और मान बड़ाई का लोभ लालच नहीं है और न मैं अपनी जाति को बट्टा लगाना चाहता हूँ। हां इस कारण से कि आप इसी मन्तव्य को लेकर आये हैं आप कहिये ताकि मैं सुन लूँ कि मेरी मान बढ़ाई के बढ़ाने का ख्याल किस राजपूत को है उस समय मुझे अपने बिचार के स्पष्ट करने का अधिक अवकाश मिलेगा।

नवां अध्याय

टालमटोल

"ख़ौफ़ की हालत में हीले से बशर लेता है काम"

हड़मति—हां महाराज! उस राजपूत के नाम से मुझे भी तो परिचित करें।

सेठ करमचंद टेकचंद—हड़मति ! तुझे क्या होगया है ! क्या तुझे नहीं मालूम है कि यह किसके भाट हैं ?

हड़मति—यह तो मालूम है। लेकिन मैं यह तो नहीं जानता कि किसने इनको मेरे पास भेजा है।

सेठ—यह जिसके आदमी हैं उसी ने तो इनको भेजा होगा यह और किसी के नौकर तो नहीं हैं। राजा के भाट अन्य किसी की नौकरी तो नहीं करते फिरते।

हड़मति—सत वचन ! कहिये रनमल जी आपकी क्या आज्ञा है ?

रनमल—मैं महाराज सिद्धराज जयसिंह गुजरात नरेश और पाटनपति की ओर से तुम्हारे पास आया हूं। और यह संदेश लाया हूँ कि तुम रानक देवी को महाराजा की पटरानो बनने के लिये मेरे संग कर दो।

हड़मति—इसका सबूत !

अब तो रनमल सब सुध बुध भूलगया। वह पाटन नगर से केवल रानक का पता लेने ही आया था। यह आशा कब थी कि वह उसे अवश्य मिल ही जायगी और वह उसे लेजाकर राजा की सेवा में भेंट कर देगा। यह संयोग की बात थी कि मजीबड़ी आते ही उसे पता मिल गया। वरन् पदमिनी स्त्रियां कहीं मारी २ तो नहीं फिरतीं। पता नहीं पृथ्वी सूर्य के चारों ओर कितने चक्र करती होगी तब जाकर संसार में कहीं कोई पद्मिनी प्रगट होती होगी। पर वह आदमी समझदार था। सोचने के बाद उत्तर दिया। मेरी मौजूदगी स्वयं इसका सबूत है।

हड़मति—देखिये कविराज जी ! मैं गँवार आदमी हूँ केवल थोड़ी सी संस्कृत मैंने सिंध देश में रहकर पढ़ी है। पर इतनी समझ तो मुझको भी है कि आप इस गरज से यहां नहीं आये थे कि मेरी पुत्री को महाराज सिद्धराज जी के पास लेजांय। प्रथम

तो आप कई दिनों से मुझसे मिलते रहे हो कभी इसकी चरचा भी नहीं की। दूसरे यद्यपि सिद्धराज जी गुजरात के सबसे बड़े राजा हैं परन्तु यह राज राखंगार का है। राजा की बिना आज्ञा कोई उसकी प्रजा को नहीं ले जा सकता। तीसरे यदि आप इसी इरादे से आये होते तो कम से कम किसी कुम्हार की मार्फत संदेश लाये होते। चौथे मुझे संदेह है कि सिद्धराज जैसा वीर राजा कभी कुम्हार की कन्या को अपनी रानी बनाना स्वीकार न करेगा। राजा तो राजा ही है और कुम्हार कुम्हार ही है। पाचवें कोई बुद्धिमान राजा इस प्रकार शिष्टाचार के विरुद्ध संदेश नहीं भेजता। छटे मैं कन्या का पिता हूं। राजा को यथा सम्भव मेरे मानसिक भावों का भी विचार रखना उचित था। सातवें आपके पास मेरे राजा राखंगार का कोई प्रमाण पत्र नहीं है और न उसका कोई उच्च अधिकारी आपके संग है जो मुझे आपकी बात का विश्वास दिलाये। सम्भव है यहाँ आकर आपने मेरी पुत्री को देख लिया हो। या किसी ने आपको भेजा हो। बिना निश्चय किये मैं कैसे आपका विश्वास करूँ।

बात यथार्थ थी। रनमल अपनी कविता भूल गया, उसने उत्तर देने को तो दिये। परन्तु झूँठ के पांव नहीं होते। वह सिद्ध नहीं कर सका कि सिद्ध राज की ओर से है।

संसार में इसी तरह जिस इरादे, जिस नीयत और जिस इच्छा में दृढ़ता मुख्य रूप से नहीं होती उसके प्रगट करने में मनुष्य को सदा मुंह की खानी पड़ती है। और उसके सब प्रयत्न निष्फल रहते हैं। मनुष्य ईश्वर की भक्ति करने चलता है। टेढ़ा रास्ता इख्त्यार करता है। मन में चंचलता रहती है। ज्ञान हो, भक्ति हो, कर्म हो या धर्म हो इनमें से कोई कर्म बिना गुरू की कृपा के सफल नहीं होता। गुरु अपनी आत्मिक शक्ति देकर भक्त ज्ञानी कर्मेष्टी, धर्मेष्टी और योगी को प्रथम सच्चे मार्ग का संस्कार देते

हैं। तब उनमें साहस, दृढ़ता और पवित्रता और सचाई आती है और सतसंग में अन्य धर्मों के नियमों को भले प्रकार समझा कर तब उनको शनैः २ सार तत्व का ज्ञान प्रदान करते हैं और उनका मनोरथ सफल कर देते हैं। हर स्थान में एक ही नियम काम करता है। हां समय और घटनाओं का अन्तर हुआ करता है। यह ठीक है कि रनमल को रानक के पद्मिनी होने का ज्ञान था मगर उसको सिद्धराज से योग्य और आवश्यक कार्रवाई भी कराना था। वह दृढ़ सकल्प करके वहां से आता तो उसको एक नीच मिट्टी के बर्तन बनाने वाले कुम्हार के समीप इतनी अवज्ञा न होती और न उत्तर तक देने में चुप होकर नीचा देखना पड़ता।

रनमल को व्याकुल देखकर सेठ कर्मचन्द टेकचन्द बोल उठे। हड़मति! क्या तुझे मेरा भी विश्वास नहीं है? तू जब से यहां रहता है मेरे साथ तेरा व्यवहार है मैं असत्य तो नहीं कहूंगा मैं इनको भले प्रकार जानता हूँ। मेरी बात मानले।

हड़मति—यदि आपकी बात मानलूँ तो फिर मुझे क्या कहना उचित है।

सेठ कर्मचन्द—रानकदेवी को इनके संग कर देना चाहिये।

हड़मति—बहुत ठीक! एक न सही तो दूसरी सही! सेठ जी! आप कहते क्या हैं! मेरा और आपका व्यवहार रुपये पैसे का है। मैं आपका ऋणी हूं। यह सत्य है। पर हर विषय में तो आपका विश्वास नहीं कर सकता! कैसे सम्भव है कि कोई व्यक्ति अपनी कन्या केवल आपके कहने से किसी दूसरे को दे देगा। यह आप समझ सकते हैं कि संसार में मैं ही तो लड़की वाला नहीं हूँ। सबकी सन्तान हैं। आप स्वयं न्याय कीजिये। फिर यदि मैं मान भी लूं कि राजा सिद्धराज मेरी पुत्री को अपनी पटरानी बनाना चाहते हैं तो राजा की रानियां दो चार अनजान पुरुषों के संग तो नहीं भेजी जा सकतीं। उनकी मान बड़ाई का भी कुछ

ध्यान होता है। तीसरे यदि आज मैं अपनी कन्या पाटन नगर को भेज दूं और राजा राखंगार सुन लें और वह मुझसे पूछ बैठे कि तैंने ऐसा क्यों किया तो मेरे पास क्या उत्तर है! पानी में रहकर मगर मच्छ से बैर मोल लेना कौनसी बुद्धिमानी की बात है!

सेठ करमचन्द—तू बड़ा कहीं का अक़्लमन्द हो गया है। किसी की बात का विश्वास नहीं करता।

कृष्णदास—सुनो सेठ जी! क्रोध करने की बात नहीं है। इस समय हड़मति ने जो कुछ कहा है वह ठीक और सत्य २ कहा है। मनुष्य वह ही है जो विवेक विचार कर काम करे। जो लोग बिना विवेक विचार के कर्म करते हैं उनका अन्त अच्छा नहीं होता। इसमें जल्दी की क्या आवश्यकता है।

रनमल—जल्दी तो मैं इसी हड़मति की भलाई के लिये कर रहा हूं। इस समय राजा का चित्त इस लड़की की ओर है। कल कौन जाने क्या हो जाय। राजाओं के चित्त चलायमान रहते हैं।

हड़मति—फिर जहां चित्त ही स्थिर न होगा वहां कोई अपनी कन्या कैसे देगा। कोई व्यक्ति इस इच्छा से तो सन्तान नहीं पैदा करता कि उसको कूये में डाल दे। शास्त्र कहते हैं कि कन्या और गऊ की दशा एक जैसी है वह बेजुबान होती हैं। जिसको चाहो उन्हें दे दो। वह आपत्ति या इन्कार न करेंगी। परन्तु माता पिता का यह धर्म है कि वह योग्य वर ढूँढ़ें।

सेठ करमचन्द—हड़मति नहीं मानने का! जाति का कुम्हार और भाट ब्राह्मणों को शास्त्र की बात सुनाता है। कलियुग आगया। इसमें कुछ भी संदेह नहीं है।

हड़मति—कुम्हार के घर जन्म लेने से मैं मनुष्य से पशु तो नहीं बन गया। यदि कुम्हार ऐसी ही नीच जाति है तो फिर

उसकी लड़की के लिये आप लोग क्यों इतनी वृथा कहन सुनन और झगड़ा करते हैं। इस विषय को जाने दीजिये और छोड़ दीजिये।

सेठ करमचन्द—तू बहुत बातें करता है। इसका तुझको बदला चुकाना पड़ेगा, दुख उठाना होगा।

हड़मति—यह क्यों ? मैं अपनी कन्या किसी विजाति को नहीं देता। इसमें किसी का बुरा क्या करता हूँ और मुझ पर किसी को अत्याचार करने की कौन और कब समर्थ है ? और आप मुझे धमकाते क्या हैं। यह ही ना कि मैं आपका सौ पचास रुपये का ऋणि हूँ। आप ब्याज सहित अपना रुपया ले लें। मेरी जान तो नहीं मार सकते ! सौ बातों की एक बात यह है कि मैं जीते जी अपनी लड़की किसी को भी न दूंगा। चाहे कोई खुश हो या ना खुश हो। और जब तक जान में जान है मैं इसकी रक्षा करूंगा यदि आप के पास बल और शक्ति है तो हम दीनों का भी दीन दयाल रक्षक है।

बात कहां से कहां जा पहुँची। सब लोग समझ गये कि जल्द बाजी काम को बिगाड़ देगी। शंकरदास साधू ने हड़मति से कहा। हड़मति ! तुम समझदार हो। ऐसी बातें जिभ्या पर न लाओ। इन बातों की जरूरत नहीं है।

हड़मति—भगवन ! आप जानते हैं मैं सीधा सादा मनुष्य हूँ। न ऊधो के लेन में न माधो के देन में। यदि कोई पुरुष मुझे वृथा धमकाता और सताता है तो फिर मैं चुप कैसे रहूं। खेद है ! संसार में न्याय नहीं रहा। सेठ जी मेरी कन्या के सम्बन्ध में ऐसे कटु बचन बोल रहे हैं। यदि मालिक की मौज हो और ऐसा अवसर उनके यहां आ जाय तब वह क्या कहेंगे।

यह सुनना था कि सेठ कर्मचन्द के तन में आग लग गई।

नीच जाति के कुम्हार ! तेरा ऐसा हौसला कि मुझ को ऐसी बात कहे।

शंकरदास और रनमल दसोंधी ने सेठ को पकड़ लिया। वरन् कौन जाने कि वह हड़मति के साथ क्या व्यवहार कर बैठता।

शंकरदास—रनमल जी ! यह क्या हो रहा है। आप किस ग़रज़ से आये और क्या कर बैठे।

रनमल—महाराज ! मेरा कोई दोष नहीं है। यह सेठ जी का क़सूर है।

हड़मति—जाओ जो करना हो करलो। जिभ्या को संभाल लो। मुझे तुम जैसे मनुष्यों की चिन्ता नहीं है।

शंकरदास—हड़मति संतोष करो। सेठ जी ! थोड़ा मन में धीरज धरो। बात ही क्या है जिसके लिये आप लोग आस्तीन संभालने लगे। मुझे हड़मति की वार्तालाप में थोड़ी भी त्रुटि नज़र नहीं आती। माता पिता को अपनी सन्तान पर हर प्रकार का अधिकार रहता है और शास्त्र कंगाल से कंगाल और नीच से नीच जाति को भी इससे वंचित नहीं रखते। रनमल जी ! आप लोगों ने वृथा ही बात का बतंगड़ा कर दिया। कहीं इस प्रकार शादी विवाह के सम्बन्ध भी तै हुये हैं। हर जगह निर्दयता और कठोरता से काम नहीं निकलता। आप लोग अब यहां से पधारें। मैं हडमति को समझाऊँगा। संभव है वह मान जाये।

सेठ करमचन्द—कहीं सीधी उंगली से भी घी निकला है।

हड़मति—यदि मैं सीधा न होता तो सेठ जी आपको कभी टेढ़े होने का इस प्रकार साहस न होता। लेकिन यह मैं आपको कहे देता हूं कि मैंने इस लड़की के ऊपर सिंध देश छोड़ा। कच्छ में आया। वहां के राजा लाखा फूलानी ने रानक से व्याहने की इच्छा प्रगट की मैं कच्छ से भाग आया। मजीवड़ी में इस कारण ठहर रहा हूँ कि राखंगार के राज में न्याय होता है और यदि यहाँ

भी मेरे साथ किसी ने अत्याचार किया तो या तो वह नहीं या मैं नहीं। मुझे अपनी जान प्यारी नहीं है मगर यह कन्या प्यारी है।

सेठ करमचन्द—तो क्या तू मेरा ऋण भी न चुकायेगा।

हड़मति—आप मुझ से सौ रुपये की रक़म के बदले सैकड़ों ब्याज में लेचुके हैं। मैं बेईमान नहीं हूँ। जब रुपया होगा आपको कौड़ी २ भुगतान कर दूँगा। लेकिन यदि आप यह चाहें कि ऋण के दबाव से मुझसे अनुचित कर्म करालें। यह कभी न होगा।

सेठ करमचन्द—आज से एक सप्ताह के भीतर तुझे मेरे रुपये का भुगतान करना होगा।

हड़मति—देखा जायगा।

सेठ करमचन्द—मैं तुझ पर एक सप्ताह के पश्चात नालिश करूँगा। और सब जायदाद कुर्क करालूँगा।

हड़मति—तुम मेरा बाल तक बांका नहीं कर सकते। "राखन हार भये भुज चार तो होत कहा दो भुज के बिगाड़े" यह न समझिये कि हड़मति ग़रीब है और कुम्हार है। मैं जान पर खेलने वाला मनुष्य हूँ। जिसको जान का भय नहीं है उसका मुक़ाबला आप जैसे ब्याज खाने वाले नहीं कर सकते।

सेठ मन में कांप उठा। मगर क्रोध वश उसके होट तिल-मिलाने लगे। शंकरदास ने फिर इन दोनों को समझा कर बीच बचाव कर दिया और हड़मति से कहा कि तुम तो ईश्वर के भक्त हो। ऐसे आपे से बाहर क्यों होते हो?

इसने उत्तर दिया कि देखिये असभ्यता का व्यवहार मेरी ओर से हुआ या इनकी ओर से।

शंकरदास—इनको तो धन का अभिमान है।

हड़मति—तो मुझे भी ईश्वर का अभिमान है।

शंकरदास—शाबाश! ईश्वर पर भरोसा रखने वाले को

कष्ट नहीं होता। तुम निश्चिन्त रहो। परन्तु इस समय कहो रनमल को क्या कह कर टाला जाय।

हड़मति—इनको समझाइये कि कुम्हार की कन्या क्षत्री कुल के लिये शोभा नहीं देती लेकिन यदि सिद्धराज को वास्तव में रानक देवी से विवाह करने का विचार है तो उसके लिए यथावत् कार्यवाही की जाय और मुझ को विश्वास दिलाया जाय कि संदेश स्वयं राजा की ओर से है तब मैं सोचूंगा और विचार के बाद जो मुझे यथार्थ जँचेगा वैसा करूंगा।

रनमल—बस अब अधिक कहने की आवश्यकता नहीं है। तुमको आज से दो मास पर्यन्त इसका विश्वास किसी न किसी तरह करा दिया जायगा। सेठ जी ! आप भी क्रोधित न हों। हड़मति आप समझदार आदमी है सब प्रबन्ध सुविधा के साथ कर लिया जायगा।

दसवां अध्याय

शादी

"दिल जो दिलदार से आबाद हो वह शादी है"

शंकरदास सेठ करमचन्द टेकचन्द और रनमल दसाधी अपने साथियों को साथ लेकर चले गये। हड़मति घर के अंदर अधिक उदास था। रानक ने उसके हाथ मुंह धुलाये। कुछ खिलाया पिलाया। और जब वह शाँत होकर बैठा उसकी स्त्री और कन्या रानक देवी दोनों ने पूछा कि सेठ के संग ऐसी कहन सुनन क्यों हुई थी। पहले ऐसा तो कभी अवसर नहीं हुआ था। इसने सारी कथा आदि से अंत तक कह सुनाई। पुन्जी आखिर को स्त्री थी। लालच में आगई। बोली इसमें आखिर तुम्हारा हर्ज ही क्या था। यदि सिद्धराज इसको अपनी रानी बनाना चाहता है तो यह तो इसका अहोभाग्य है ! मनें क्यों किया। तुम

जानते हो रानक कौन है। बड़े घर की कन्या बड़े ही घरों में व्याही जाती हैं। मैंने तो भले प्रकार से समझ लिया है कि यह किसी कुम्हार के घर नहीं जा सकती। क्या इसके रंग ढंग से तुमको प्रतीत नहीं होता। यह केवल हम लोगों के खुश और राज़ी रखने की नीयत से घर के काम काज करती है। जहां भेजो चुपचाप चली जाती है। वैसे यह इन कामों के योग्य नहीं है। तुमने भारी भूल की। ऐसे अवसर बार २ हाथ नहीं आते। और फिर क्या जाने इस कटु सम्बाद का क्या परिणाम हो। सेठ बुरा आदमी है। तुम इसके क़र्ज़दार हो। सिद्धराज भी कठोर हृदय का है। तुमको इन सब बातों का ध्यान करके उत्तर देना था।

हड़मति—मैंने खूब सोच समझ कर जबाब दिया है।

पुंजी—तुमने क्या सोचा था कुछ भी नहीं। यदि सोच विचार कर ही बात की होती तो सेठ करमचन्द जी से इतना थुक्का फ़ज़ीता क्यों होता।

हडमति—अभी मैं बाहर से लड़कर आया हूँ। क्या तू भी घर में मेरे साथ लड़ाई करना चाहती है।

पुंजी हंसी नहीं मैं लड़ना नहीं चाहती। रानक अन्त को मेरी पुत्री भी तो है! मुझे भी तो इस पर कुछ अधिकार है।

रानक ने माता की ओर दृष्टि की फिर पिता को देखा।

हड़मति ने कहा सुन्दरी! चाहे रानक तेरी गोद में पली है पर तू उसके स्वभाव को नहीं जानती। मैं खूब पहँचानता हूँ।

पुंजी—भला मैं भी तो सुनूं। अब तक तो मैं यह ही सुनती आई हूँ कि पुरुषों को स्त्रियों के स्वभाव का ज्ञान नहीं होता। स्त्रियां ही स्त्रियों के स्वभाव को जानती हैं लेकिन आज तुम कह रहे हो कि मर्द ऐसी बातों को स्त्रियों से भी कहीं अच्छे

समझते हैं। सम्भव है यह सच हो चाहे मैं विश्वास करूं या न करूं।

हड़मति—रानक से पूछ देख।

पुंजी—आज तक इस विषय में लड़की से भी किसी ने बात चीत की है ? उस बेचारी को क्यों सकुचाते हो। जो कहना सुनना हो मुझ से ही कहो सुनो।

हड़मति—सिद्धराज के घर में सोलहसौ रानियां हैं। और न जाने कितनी और स्त्रियां हैं। मैं रानक को केवल ऐसे पुरुष के सङ्ग ब्याहूंगा जिसके यहां कोई और स्त्री न हो और जब तक वह खुद किसी के साथ विवाह करने को राज़ी न होगी तब तक मैं कभी उसके साथ निर्दयता का व्यवहार न करूँगा। मैं उसे अपनी आँख की पुतली समझता हूं। भाग्य पर तो किसी का बस नहीं है पर मुझसे जहां तक हो सकेगा इसका किसी अच्छे घर में ब्याह करूंगा जिससे यह सुखी रहे।

पुञ्जी—बात सच्ची कहते हो। लेकिन यह तो बताओ आज कल कौनसा अच्छा घर है। मर्द दो चार औरतें नहीं ब्याहते और फिर राजाओं का तो कहना ही क्या है, किसी २ के महल में तो सैकड़ों और हज़ारों तक की नौबत आजाती है। तुम को कोई बड़ा घर तो कठिनाई से मिलेगा।

हड़मति—चिन्ता न कर ! कन्या कभी कुंवारी नहीं रहती पुरुष चाहें कुंवारे बैठे रहें। क्या आज तक तैंने किसी कन्या को बिन ब्याही देखा है।

पुंजी—नहीं ! यह बात तो सच है। पर रानक के मन की बात क्या है !

हड़मति—क्या अब तक मैंने तुझे नहीं बता दिया जो तू फिर भी पूछती है। जी में आये उसको अलग लेजाकर पूछ देख। मैं झूठ नहीं कहता। रानक भोली भाली ज़रूर है मगर वह सोच समझ वाली भी है।

पुंजी—मैं अलग क्यों लेजाऊं। मेरी पुत्री शर्माती नहीं तुम उसके पिता हो। माता पिता से सकुच कैसी! बता बेटी! सिद्धराज के संग विवाह करने से तुझे इन्कार है! रानक ने लज्जावश नार नीची करली।

पुंजी—बेटी! यह लज्जा करने का समय नहीं है। तू सुन चुकी है कि तेरे विवाह के सम्बन्ध में तेरे पिता से और सेठ जी से झगड़ा होगया। वह किसी और विचार में हैं। मेरा ध्यान कुछ और है। ईश्वर जाने तेरा ख्याल क्या है। ऐसा न हो कि नासमझी से कुछ का कुछ होजाय और फिर हम सबको पछताना पड़े, इसलिए तुझे अपने जी की बात कह देनी उचित है।

रानक फिर शरमाई और अपने सिर को माता की गोद में डालकर छिपा लिया।

हड़मति—बेटा! तू सकुच क्यों करती है। यह तेरा दुर्भाग्य है कि तू कुम्हार के घर में पली है। तेरे माता पिता ग़रीब और नीची जाति के हैं। नहीं तो तेने सुन रक्खा होगा। प्राचीन समय में क्षत्री कन्यायें अपने लिये आप वर खोजती थीं। स्वयम्वर रचा जाता था। स्वयंवर का अर्थ ही यह है कि कन्या अपनी रुचि का वर छाँट ले। सीता ने ऐसा ही किया। द्रौपदी ने ऐसा ही किया और सदा से ऐसा ही नियम चला आता है। सावित्री ने राजा की कन्या होते हुये सत्यवान साधु को अपना पति बनाया। मनू की पुत्री देवहुती ने कर्दम ऋषि को अपना पति बनाया आदि २। कहां तक मैं तुझे सुनाऊं। पुत्री! चाहे मैं कंगाल हूं पर तू जानती है मैं तुझको हितचित से प्यार करता हूं और तुझको प्रसन्नता पूर्वक स्वीकृति देता हूं कि जिस प्रकार के वर को तू चाहे उसे स्पष्ट रूप से प्रगट करदे। अब अधिक विलंब करने का अवसर वहीं है। यदि तैंने इसका निर्णय शीघ्र ही नहीं किया तो सेठ जो मेरा शत्रु बन गया है, वह आज ही मुझे अपने कर्ज के भुगतान करने की

धमकी दे गया है, सिद्धराज के भाट उसके साथ हैं, वह राजा को शत्रुता करने को उकसायेगा और फिर मुझसे कुछ करते धरते न बनेगा। हाँ! यह ज़रूर है कि पहले मैं मरलूंगा तब किसी को तुझे ले जाने का साहस होगा। लेकिन यदि तू आज अपने जी की बात कहदे तो अभी समय है उसके अनुसार मैं प्रबन्ध कर लूंगा।

रानक के लज्जा और सकुच की क्या दशा थी! चाहे वह क्षत्री कुल में पैदा हुई थी। पर पालन पोषन तो शूद्र के घर हुआ था। उसका भी तो आखिर कुछ संस्कार होना चाहिये था। उसने अपने मन में दो चार क्षण विचार किया। फिर माता की ओर दृष्टि करके सकुचती हुई बोली। माई! तेरी पुत्री की शादी हो चुकी है! अब दूसरी दूसरी शादी कैसे हो सकती है!

साईं मेरा सुलच्छना मैं पतिव्रता नार।
देव दीदार दया करो मेरे निज भरतार।

हड़मति और पुँजी दोनों ही इस उत्तर से चकित रह गये। एक दूसरे का मुँह देखने लगे। कुछ देर तक दोनों चुप थे। पता नहीं उनके जी में कैसे२ विचार पैदा हुये होंगे। किसी कुमारी कन्या का अपने माता पिता से यह कहना कि उसका विवाह हो चुका है वास्तव में आश्चर्यजनक समस्या थी।

हड़मति ने पूछा! बेटी मैं इस रहस्य को अब तक नहीं समझ सका। मैं जानता हूँ मेरी कन्या नितांत निर्दोष और सदाचारिणी है। वह बिना सोचे समझे कोई बात अपनी जिभ्या से नहीं निकालती। तू मुझे समझादे तेरे इस कहने का क्या तात्पर्य है?

रानक ने फिर अपना सिर माता की गोद में छिपा लिया। उसके नेत्रों से आँसू जारी हुये।

पुँजी घबराई। उसने कहा बेटी तू रोती क्यों है? अपना हाल क्यों नहीं सुनाती। साफ़ २ कहदे मैं बुरा न मानूंगी।

रानक ने सिर उठाया। माताजी ! मैंने प्रण किया था कि जो व्यक्ति मेरा हाथ पकड़ेगा मैं उसी की होकर रहूँगी। यदि वह मुझे अङ्गीकार न करेगा तो मैं आयुपर्यन्त कुमारी ही रहूंगी। माता पिता की सेवा करूँगी। भाई का पालन पोषण करूँगी और उसकी सन्तान को अपनी सन्तान मानकर प्रेम प्यार का व्यवहार करूँगी।

पुँजी और हड़मति ने फिर एक दूसरे की ओर दृष्टि की।

हड़मति—तेरा हाथ किसने पकड़ा ?

रानक–जिसने मुझे वह अँगूठी दी थी, जो मैंने आपको दिखाई थी वह अब तक मेरे पास सुरक्षित है

हड़मति ने कहा बेटी ! अंगूठी तो तुझे राजा राखंगार ने दी थी।

रानक—हां वह ही मेरे उसी समय से पति हो गये।

हड़मति—राजा ने तुझ से कुछ कहा भी था ?

रानक—नहीं केवल इतना कहा था कि आवश्यकता पड़ने पर इस अंगूठी को दिखाकर मुझ से मिल सकती है।

हड़मति—यह तो कोई बात न हुई। राजे महाराजे बहुधा इनाम में अंगूठियां दिया करते हैं। इससे तैने कैसे जान लिया कि वह तेरे पति हो गये।

रानक—मैं यह तो नहीं कहती कि वह अपने आपको मेरा पति मानते हैं पर मैं अपने भाव व विचार में उनको अपना पति मान बैठी हूं।

हड़मति—यदि वह तुझे स्वीकार न करें तो फिर क्या करना होगा ?

रानक—मैंने आपसे प्रथम ही कह दिया है कि मैं आयु पर्यन्त उनका नाम लेकर बैठी रहूंगी।

हड़मति—यह भाव तेरे चित में कैसे पैदा हुआ ?

रानक—एक दिन स्वामी कृष्णदास आप से कह रहे थे कि ईश्वर, पति, और गुरु यह केवल भाव से प्रगट होते हैं। जो मनुष्य ईश्वर को अपना मान लेता है वह उसी का हो जाता है। केवल मान लेने और विश्वास के दृढ़ कर लेने की बात है।

जिसको विश्वास है उसको ईश्वर मिलता है। जिसको विश्वास नहीं है उसको ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती मुझे भी पति का ऐसा ही विश्वास है। मैंने भी विश्वास से उनको अपना पति बना लिया।

हड़मति—यह भाव बड़ा श्रेष्ठ है। सारी बात विश्वास ही की है। जिसका जिस पर विश्वास होता है वह उसे अवश्य मिलता है।

जापर जाकर सत्य सनेहू। सो तिहि मिले न कछु संदेहू॥

रानकदेवी—यह मेरी भी प्रतिज्ञा है चाहे कुछ क्यों न हो मैं इस प्रण पर दृढ़ रहूँगी। और जीते जी किसी अन्य पुरुष का नाम न लूँगी। मुझे सिद्धराज से कोई प्रयोजन नहीं है। ईश्वर, गुरु और पति यह बदला नहीं करते। स्वामी जी ने यह कहा था कि जो पुरुष अपने भाव विश्वास और भक्ति को बदलता रहता है वह व्यभिचारी और पतित होता है। आपकी पुत्री पतित न होंगी। उसका एक बार मानसिक रीति से व्याह होगा। अब और वर की खोज व्यर्थ है। यदि आप मुझ से न पूछते और सिद्धराज के संदेश को अंगीकार कर लेते तो मैं जिभ्या खोलने वाली नहीं थी। जीतेजी मर जाती। दूसरे पुरुष का मुख न देखती अच्छा किया आपने मुझ से पूछ लिया।

हड़मति और पुंजी दोनों ने बारी २ से लड़की के शीश को पुचकार कर चूम लिया और उसके भाव की प्रशंसा की और हड़मति ने कहा बेटी! तू कुम्हार की पुत्री नहीं है। तू सिद्धराज की कन्या है। क्षत्री कन्याओं के प्रण पहले भी ऐसे ही होते थे। तू धन्य है।

रानक—पिता जी ! मैं आपके और माई के अतिरिक्त किसी अन्य को अपना माता पिता नहीं जानती। और न मुझे राज कन्या कहलाना शोभा देता है। मैं कुम्हार की कन्या हूँ और मेरा पति मुझे कुम्हार की ही लड़की समझेगा। यदि सिंध का राजा मेरा पिता होता तो मैं आपके यहाँ न आती। आप ही मेरे पिता हैं। अब रानक को कभी अन्य की पुत्री न कहियेगा।

हड़मति और पुंजी दोनों की आंखें प्रेम के आंसुओं से डबडबा आईं। दोनों ने मिल कर उसे आशीर्वाद दिये। रानक ! गुरु आशीर्वाद दें कि तू संसार में सती, सावित्री, और सीता के समान स्त्रियों में नेक नाम रहे ! पति की प्यारी रहे ! और गुजरात देश की स्त्रियां तेरा नाम लेकर स्वर्ग का सुख भोगें।

इसके पश्चात् हड़मति और पुंजी ने सलाह सूत की और अभी कुछ रात बाक़ी थी कि उन्होंने रानक और अपने छोटी आयु के बालक को ले जूनागढ़ का रास्ता लिया। और किसी को कानों कान भी खबर नहीं हुई ! कि यह कहां चले गये, क्योंकि इन्होंने किसी को भी अपना भेद नहीं दिया। यहां तक कि स्वामी कृष्णदास से भी परामर्श लेने की आवश्यकता नहीं समझी और मंजिलें तै करते हुये जूनागढ़ पहुँच गये।

❀ दूसरा कांड समाप्त ❀

ग्यारवां अध्याय

पश्चाताप

"नादानी का अंजाम है अफ़सोस हमेशा"

कहावत है। जन (स्त्री) जमीन और जर (धन) तीनों झगड़े के घर। परन्तु यह ही तीन वस्तुयें इस संसार में मनुष्य के भाग्य को बनाती बिगाड़ती रहती हैं। चाहे एक भी मनुष्य ऐसा

न मिले जो रात दिन इनकी शिकायत न करता हो। परन्तु सब के सब न केवल इन तीनों के बन्धन में बुरी तरह से बंधे हैं बल्कि सब अपनी खुशी से इसके जाल में जीवन पर्यन्त फंसे रहना पसंद करते हैं। लाखों में से कदाचित कोई एक ऐसा निकलता होगा। जिसको इन से मुक्त होने की चिन्ता रहती है।

यदि यह किसी मनुष्य के पास तीनों हों तब भी वह इनके कारण व्याकुल रहता है और यदि यह न हों तब भी वह दुखी रहता है। इन्हीं तीनों के मिले हुये रूप का नाम माया है। साधारण रूप में कहा जाता है कि माया भ्रमाती है, मगर यथार्थ तो यह है कि मनुष्य स्वयं अपनी नादानी से, भूल से, जान बूझ कर माया के बन्धन में पड़ता है। बिना माया के इसको चैन कहां!

दूसरे दिन प्रातः ही सेठ करमचन्द टेकचन्द उस जगह पहुँचा जहाँ पाँचों भाट ठहरे हुये थे। यह उसकी बाट ही देख रहे थे। हड़मति ने कोई साफ़ बात नहीं कही थी। मगर इनको इतनी समझ थी कि उसने बहाने २ में इनको टाल दिया है। पांचों सूत सलाह कर रहे थे कि रानकदेवी को किस प्रकार पाटन देश ले चलें। मगर बुद्धि काम नहीं करती थी। हड़मति को रुपया पैसा या मान प्रतिष्ठा की चिन्ता न थी। यह आशा थी कि करमचन्द टेकचन्द उसको सभ्यता और सुशीलता के व्यवहार से ही सन्तुष्ट कर लेंगे। पर उसकी जल्द-बाज़ी ने काम बिगाड़ दिया। कहन सुनन को नौबत आ गई। यह सत्य है कि हड़मति ग़रीब था। ग़रीब को दबाने का साहस हर एक को होता है। पर छोटे आदमियों का भी दस्तूर है कि जब उन पर इस प्रकार के असह्य और कठोर व्यवहार का प्रहार होता है तो दूसरे मनुष्य भी उनके सहायक और हितैषी बन जाते हैं और मामला बढ़ जाया करता है। यहाँ तक कि अत्याचार करने वालों को अपनी जान बचानी कठिन हो जाती है।

भाट नहा धोकर इसी चिन्ता में थे कि सेठ वहां आ पहुँचा। दसोंधी जी ! राम राम !

रनमल—राम राम ! सेठ जी ! कहो क्या समाचार है।

सेठ करमचन्द—आप लोग कुछ चिंता न करें मैं हड़मति को सीधा कर लूंगा।

रनमल—उसका सीधा होना बड़ा कठिन काम है। वह मामूली आदमी नहीं है जिस पर आप किसी तरह का दबाव डाल सकें।

सेठ—आप क्या कहते हो। रुपये में बड़ी ताक़त होती है। जहां रूपेराम बोलते हैं वहां सब चुप हो जाते हैं।

रनमल—हर जगह रुपया काम नहीं करता। संसार में ऐसे मनुष्य भी हैं जिन पर रुपये का जादू नहीं चल सकता।

सेठ—यह आप कहते क्या हैं ! सरकार में, दरबार में रुपया ही पूजा जाता है। व्यवहार में, व्यौपार में रुपये ही की साख रहती है। हड़मति तो चीज क्या है बड़े २ ऋषि मुनि तक रुपये के प्रलोभन में फँसकर अपने इष्ट तक की टेक को छोड़ बैठते हैं। और किसको कहा जाय। विष्णु भगवान तक तो खुद लक्ष्मी महारानी के वश में हैं। रुपया हर वस्तु को मोल ले सकता है।

रनमल—पर हड़मति रुपये से मोल न लिया जा सकेगा। वह और तरह का आदमी है।

सेठ—जब विष्णु भगवान स्वयं लक्ष्मी पर मोहित हैं तो हड़मति की क्या शक्ति है कि उससे मुक्त हो सके। आप थोड़ा धैर्य धरें ! केवल आप देखते चलें मैं किस प्रकार उसे नाच नचाता हूँ। वह जाता ही कहां है। हां ! धैर्य अवश्य धरना पड़ेगा।

रनमल—आप क्या कीजियेगा !

सेठ–वह मेरा कर्ज़दार है। जब मैंने कल उसे कहा कि मेरे कर्ज़ को हफ्ते के भीतर२ भुगतान करदे तो क्या आपने देखा नहीं उसके होश ठिकाने होगये। वह आप अपने मन में सोचता होगा। और कुछ आश्चर्य नहीं कि वह दोपहर को मेरे पास आवे और चापलोसी की बातें करे।

रनमल—मुझे आशा नहीं है। मैंने देख लिया वह बड़ा दृढ़ प्रतिज्ञ है। और अपने उसूल का पक्का है। वह दबने वाला मनुष्य नहीं है।

सेठ—आपको अनुभव नहीं है। सेठ साहूकारों से पूछिये। वह किस प्रकार रुपये के शस्त्र से बड़ों २ को मारते रहते हैं। राजे महाराजे कहने के लिये संसार पर हकूमत करते हैं पर वे भी महाजनों के पराधीन रहते हैं। लड़ाई में, सुलह में, देश को बसाने में, हर जगह रुपये की आवश्यकता पड़ती है और वह सेठों के वशीभूत हो जाते हैं।

रनमल—मगर आप यह नहीं बताते कि हड़मति को कैसे बस में लायेंगे?

सेठ—कल मैंने उसको धमकी देदी। आज ही से वह रुपये के जमा करने की चिन्ता में होगा। जिस महाजन के पास रुपया लेने जायगा आख़िर वह भी तो मेरा कुछ पास करेगा। यदि वह मुझसे नहीं दबता तो मैं औरों को सहायता से उस पर दबाव डालूंगा और अन्त में उसको मेरी बात माननी पड़ेगी। हम लोग महाजन हैं। जब कोई व्यक्ति किंचित भी हमारे आधीन हो जाता है तो हम उसे बिलकुल अपने वश में कर लेते हैं और पीढ़ी दर पीढ़ी तक उसकी सन्तान तक को अपने पंजे में दबोच रखते हैं। बनिये महाजन इस तरह काम करते हैं कि किसी को दस बीस दे दिये। ब्याज बढ़ते २ सौ और हज़ार तक पहुँच गया। जायदाद मकान, भाँड़े, बरतन, पशु सब पर धीरे २ उनका अधिकार हो जाता है और फिर क्या मजाल कोई सिर तो उठा सके। रुपये

की मार बहुत बुरी मार होती है।

रनमल—यह सब सच हो पर मुझे आशा नहीं है कि हड़मति सीधा हो सके।

सेठ—फिर उसकी और युक्ति भी है।

रनमल—वह क्या ?

सेठ—कुछ खर्चा खराबा करके ऐसे आदमी तईनात कीजिये जो अवकाश पाकर उसकी लड़की को आपके हाथ देच दें।

रनमल—सेठ जी ! यह कैसे सम्भव है ? हम लोग परदेश में आये हुये हैं और हम केवल पांच आदमी ही हैं। ईश्वर न करे; यदि कहीं लड़ाई झगड़ा हो गया तो उसका क्या परिणाम होगा। हमारा राजा सिद्धराज हमको क्या कहेगा ! इसमें भारी बदनामी होगी और हम संसार में मुंह दिखाने के क़ाबिल न रहेंगे।

सेठ—आपने अब तक मेरी बात नहीं समझी। कार्य इस प्रकार हो कि सांप मरे और लाठी न टूटे।

रनमल—यह किस तरह !

सेठ—बुद्धिमान सांप के बिल में अपना हाथ नहीं डालते। बल्कि कुछ दे दिलाकर औरों के हाथ से सांप को पकड़वाते हैं। एक दो नहीं काम करने की सैकड़ों युक्ति हैं यदि वह राज़ी न हो तो दस बीस मरदों को इस काम पर लगाइये। वह भी सफल न हों तो स्त्रीयों से काम लिया जाय। हां इस में रुपया ज़रूर खर्च होगा।

रनमल—हमारे पास इतना रुपया कहां है ! हम तो भिक्षू भाट हैं।

सेठ—रुपया खर्च करने को मैं तैयार हूँ ही मुझे वह विश्वास हो जाय कि मेरा रुपया व्याज समेत मेरी पाटन नगर की कोठी में दे दिया जाय। जब आपका कार्य हो जायगा, क्या सिद्धराज को मेरी हार्दिक सेवा का ध्यान न होगा आप विश्वास कीजिये केवल

मेरे इशारे पर काम कीजिये। मैं सब कुछ करा दूँगा। इसमें लेश मात्र भी शंका न करें।

रनमल—हम लोग पाटन नगर क्यों न चले जांय। वहां जाकर अपने राजा को इसकी सूचना दें और जो कुछ उनकी आज्ञा हो उसका पालन करें।

सेठ कुछ देर के लिये चुप होगया। उसने अपने चित में विचार किया। यदि रनमल दसोंधी चला गया तो फिर मुझे क्या लाभ होगा। सिद्धराज शक्तिशाली राजा है। वह हज़ार युक्तियों से अपना कार्य सिद्ध कर सकता है। यह सोच समझकर उसने कहा। मेरी यह राय नहीं है। जिस कार्य में हाथ लगाया है उसे अंत तक निवाहना चाहिये। कौन जाने पीछे क्या हो! हड़मति का क्या भरोसा है! क्या वह सिंध और कच्छ से इसी अपनी लड़की के कारण नहीं भागा था।

रनमल—यह सत्य है। परन्तु मेरी समझ में इस समय पर कोई बात नहीं आती। यदि आप ने जल्दबाज़ी न की होती और उस पर क्रोध न किया होता तो मैं समझा बुझाकर उसको राज़ी कर लेता अब मामला दूर तक पहुँच गया।

सेठ—संसार में ऐसा हुआ ही करता है! इससे कोई हानि नहीं हुई आप वृथा ही घबराते हैं।

अभी भाट के साथ सेठ की बात चीत ख़तम नहीं हुई थी कि साधू कृष्णदास वहां पहुँचे। सबने इनको नमस्कार किया। साधू ने आशीर्वाद दिया। इनकी सूरत से कुछ बेचैनी प्रगट हो रही थी।

रनमल ने पूछा कहिये महात्मा जी! क्या हाल है! आप इस समय कहां से आ रहे हैं।

कृष्ण दास ने उत्तर दिया। क्या कहूँ! सेठ जी के क्रोध ने बना बनाया काम बिगाड़ दिया!

सेठ—यह तो अच्छी रही। हर व्यक्ति मुझ को ही दोष दे रहा है और मैं तो धन दौलत से सहायता करने का बचन भी दे चुका हूं और हर प्रकार से सेवा को तय्यार हूँ।

कृष्णदास—परन्तु हर जगह धन द्रव्य से काम नहीं चलता।

सेठ—यह आप कहें! मैं नहीं कह सकता। यदि काम निकलेगा तो मेरी ही सहायता से निकलेगा। आप सब लोग व्यर्थ में मेरी हिजों कर रहे हैं। ख़ैर! देख लिया जायगा।

रनमल—कहिये महात्मा जी! जो श्रीमान् जी समाचार लाये हैं उसे कह सुनाइये! सेठ जी की बात पर ध्यान न दीजिये।

कृष्णदास—क्या कहूँ कुछ कहा नहीं जाता। आह! चुप भी रहा नहीं जाता! मैं प्रातः ही स्नान ध्यान पूजा पाठ करके उठा। जी में आया कि एकांत में चल कर हड़मति को समझा-ऊँगा और उसे राज़ी कर लूंगा। पर वहां जाने से पता लगा कि वह रात से ही ग़ायब है।

रनमल—वह कहां चला गया?

सेठ—अकेले गया कि बालक बच्चों को भी ले गया?

कृष्णदास—वह बाल बच्चों को लेकर चला गया और किसी को पता नहीं है कि कहां गया। न किसी से सम्मति ली। न किसी को अपना भेद दिया। मैंने पड़ौसियों से पूछा पर सब कानों पर हाथ धर गये और सब कहने लगे कि वह सेठ करमचन्द के भय से भाग गया मुझे हड़मति से कोई निजी स्वारथ नहीं था। मैं उससे सहानुभूति रखता था और मन से चाहता था कि उसकी कन्या किसी बड़े घर ब्याही जाय। केवल इसी दृष्टि से उसे आप लोगों के साथ समझाने को गया था। ज्ञात हुआ कि वह मुझ से भी फिर गया। अच्छा! जो हुआ ईश्वर की मौज से हुआ! अब उसका क्या बुरा माना जाय। पर आशा नहीं है कि अब हड़मति

का किसी को पता मिल सके। वह पहले भी इसी प्रकार कई जगहों से भाग आया था।

रनमल–अफ़सोस ! इस सेठ ने हमारे बने बनाये काम को बिगाड़ दिया ! इतनी खोज लगाकर हमने रानक का पता लगाया था। अब सिद्धराज को जाकर कैसे मुँह दिखायेंगे।

सेठ—हाय ! मेरा तो सौ रुपया मारा गया और उसका ब्याज भी गया। यदि मुझे मालूम हो जाता कि मेरी बात चीत का यह परिणाम होगा तो मैं कदापि हड़मति के घर न जाता।

सेठ का हाल बेहाल होगया। मुख की क्रांति फीकी पड़ गई। कृष्णदास या तो पहले व्याकुल थे या सेठ और भाटों का हाल देखकर ज़ोर से खिलखिला कर हंस पड़े। सेठ और दसौंधी दोनों ने पूंछा। आपको ऐसी हंसी क्यों आगई ! हमको तो खेद होरहा है और आपको खिल्ली उड़ाने की सूझी है।

कृष्णदास ने उत्तर दिया। मैं माया के फेर में नहीं था। इस कारण हंसता हूँ। और आप सब माया के फेरे में आये हुए हैं। इसीलिए दुख प्रगट कर रहे हैं। यह किस तरह ?

उत्तर दिया गया। आप दोनों ही रानकदेवी को धन और मान प्रतिष्ठा का लोभ देने वाले थे। वह दो में से किसी के वश न हुई। खेद तो होना ही था। जहां स्वारथ और आशा का प्रयोजन होता है वहां निराशा और चिन्ता का होना अनिवार्य है। मैं निःस्वार्थ था इसलिये न कुछ चिन्ता व दुख है न सुख न आनन्द सुनो एक कथा सुनाता हूं। माया ने एक समय एक सुन्दर स्त्री का भेष धारण किया। राह में बैठ गई। दो नवयुवक सिपाही उधर आये। दोनों ही उस पर मोहित हो गये। और उससे विवाह करने की इच्छा प्रकट की। माया हंसी। पहले तुम आपस में निबट लो तब मुझसे कहो। वहां कौन था जो उनको समझाता बुझाता। दोनों लड़ पड़े, ज़खमी हुए और मर मिटे और माया ने अपना

रास्ता लिया। यही दशा एक प्रकार से तुम्हारी भी हुई। तुम दोनों को माया ने मार दिया और किसी के हाथ नहीं आई। अब भी इससे शिक्षा लो।

भाट और सेठ दोनों ने साधू को तिरछी नज़र से देखा और उसने बेपरवाई से अपने आश्रम की ओर मुख किया।

बारहवाँ अध्याय

निराशा

"मायूष हुये तो दिल की हालत बिगड़ी"

रनमल,शंकरदास और सेठ करमचन्द सबने अलग २ हड़मति की खोज की। मगर उसका पता नहीं मिला। किसी ने इतना भी तो नहीं बताया कि वह किस ओर को गया। मजबूर सब निराश होगये। रनमल कई दिन तक मजीवड़ी में पडा रहा। मगर जब देखा कि भगोड़े के निशान तक का मिलना कठिन है तो उसने अपने चार साथी भाटों से कहा। आप सब पाटन को चले जाओ मैं उस समय तक वहां न आऊँगा जब तक मुझे या तो रानक देवी का पता नहीं मिलता या कोई दूसरी पद्मिनी स्त्री न हाथ आवे। उन्होंने इसके साथ रहने की इच्छा प्रगट की परन्तु रनमल ने उनकी एक न सुनी। वे लोग तो पाटन को चले गये और रनमल ने अपना एक साधू का भेष बनाकर अपना नाम गोपाल दास रक्खा और उसी रूप में गुजरात, कच्छ और सिंध देशों में बिचरने का इरादा किया। उसको भरोसा था कि कहीं न कहीं हड़मति अवश्य मिल जायगा।

जिस समय लाल भाट आदि पाटन पहुँचे और राजा से भेट के लिए पेश किये गये उनकी सूरत देखते ही वह जान गया कि इनको अपने प्रयोजन में असफलता हुई है उसने पूछा रनमल

कहां है ? चुंच ने उत्तर दिया उसने साधू का भेष बना लिया है और देश विदेश घूमेगा।

सिद्धराज—क्यों ?

चुंच—हमारी कथा आपत्ति विपत्त से भरी है। रनमल हमको कई जगह लेगया। सोरठ देश के एक मजीवड़ी गाँव में एक पद्मिनी कन्या का पता लगा। उसके हेतु हम सब ने अत्यंत प्रयत्न किये। हर प्रकार से आशा थी कि उससे आप के महल को सुशोभित करेंगे पर करमचन्द सेठ ने अपने उतावले पन से बना बनाया खेल बिगाड़ दिया। पद्मिनी का पिता डर गया और वह रातों रात उसे मालूम नहीं कहाँ भगा ले गया। हम सब ने बहुत खोज की पता नहीं लगा।

सिद्धराज—उस लड़की का रूप रंग कैसा था ?

लाल भाट—चन्द्रमा के रूप में तो काले धब्बों का भ्रम होता है। वह चन्द्रमा से भी अधिक सुन्दर थी। सिर से पांव तक वह नूर के सांचे में ढली हुई थी। इससे अधिक उसकी शोभा की और क्या उपमा दें।

सिद्धराज—किस जाति की कन्या थी ?

चुंच—कुम्हार की।

सिद्धराज—हंसा। खूब ! रनमल ने अच्छा जोड़ मिलाया था। कुम्हार की कन्या और पाटन देश की पटरानी हो। पहले भी मुझे उसने उसका हाल सुनाया था।

भंगड़—सरकार जब उसे देखते तब कहते। कन्या क्या थी गुलाब का फूल थी।

सिद्धराज—रनमल फिर कहाँ चला गया।

चुंच—हम तो उसे मजीवड़ी में ही छोड़ आये थे। पर अब वह वहां भी नहीं है।

सिद्धराज—उसने चलते समय तुम लोगों से क्या कहा था।

लाल—उसने यह कहा था कि अब मैं पाटन जाकर किसी को अपना मुख क्या दिखाऊँ। महाराज मुझे क्या कहेंगे और नगर निवासी क्या कहेंगे! जब तक मैं कहीं से पद्मिनी की खोज न कर लूँगा तब तक घर की ओर न लौटूँगा।

सिद्धराज—रनमल सच्चा आदमी था। तुम लोगों को भी उसका साथ देना उचित था। प्राचीन समय के भाट भी बात के धनी और सच्चे होते थे।

भंगड़—हमारा जी भी यह ही चाहता था कि उसके संग रहें परन्तु उसने हमको रहने नहीं दिया और फिर श्री महाराज को भी सूचना देनी थी।

सिद्धराज—अच्छा समाचार लाये! इस सूचना की मुझे क्या आवश्यकता थी। अच्छा हो तुम चारों एक सप्ताह तक घर में आराम करो। फिर रनमल की खोज में जाओ। ऐसा न हो कि वह हाथ से जाता रहे। बड़े काम का आदमी है।

भाट—सत वचन! * तीसरा हिस्सा समाप्त *

तेरहवां अध्याय

आश्चर्य

"दुनियां के कारोबार में हैरत का है ज़हूर"

कई वर्ष बीत गये। राखंगार को सम्भव है सुध तक न रही हो कि मजीबड़ी में उसने अद्भुत सौन्दर्य की देवी के रूप की छटा का क्या दिव्य दृश्य देखा था। हम रोज़ नये २ दृश्य देखते हैं और रोज़ उनको भूल जाया करते हैं। केवल कोई आश्चर्यजनक घटना ही अपना प्रतिबिम्ब छोड़ जाती है। याद रहना और भूल जाना दोनों ही इस रचना में स्वाभाविक है। जाग्रत की बातों की स्वप्न में विस्मृति हो जाती है और स्वप्न के दृश्यों का सम्बन्ध जाग्रत की सुध बुध से नहीं रहता। कोई व्यक्ति

पूर्ण रूप से नहीं कह सकता कि हम सब कुछ भूल ही जाया करते हैं। कुछ २ बातें याद रह भी जाती हैं। स्वप्नावस्था में देखे हुये व्यक्ति जब जाग्रत अवस्था में कहीं दीख जाते हैं तो हमको सोचने को विवश होना पड़ता है कि इनको पहले कहीं अवश्य देखा था। इसी प्रकार जाग्रत के दृश्य भी कभी २ स्वप्न में आंखों के सामने आजाते हैं। आश्चर्य की बात तो यह है कि कभी २ एक ही रूप के स्वप्न के दृश्य बार २ स्वप्नावस्था में देखे जाते हैं। यह क़रीब २ बहुत से मनुष्यों का अनुभव है। अथवा सुध और बेसुधी दोनों ही मन के अङ्ग हैं। इनमें शुभ और अशुभ दोनों ही गुप्त हैं। साधु सन्यासी क्या करते हैं? वह स्वतन्त्रता पूर्वक अवगुणों के प्रभावों को भुलाते और सदगुणों को जाग्रत अवस्था और स्वप्नावस्था दोनों में समान रखने का साधन करते हैं। स्मरण ध्यान और विचार इसी का नाम है और वह इसी एक साधन को न केवल जाग्रत और स्वप्न में साध रखते हैं बल्कि उसी के प्रभाव को और भी अन्य अवस्थाओं तक अपने साथ ले जाते हैं। यहां तक कि गहरी नींद (सुषुप्ति) या तुरिया तक उसको निरंतर अपने चित्त में रखते हैं। परन्तु यह दशा सर्व साधारण की कम होती है। विशेष कर जो संसार में बड़े आदमी कहे जाते हैं वह तो इसकी हवा को भी अपने आपे से लगने नहीं देते।

राज दरबार के काम काज इस प्रकार के कर्तव्य हैं। नियम है जो मन को निरन्तर चंचल बनाये रखते हैं। यह ही कारण है कि बहुधा राजा और अधिकारी जन अधिकांश चंचल स्वभाव के कहे जाते हैं।

राखंगार दरबार में बैठा था। एक मनुष्य पेश किया गया सलाम करने के बाद उसने एक अंगूठी भेंट की। राजा ने अंगूठी पहँचानी। पर अंगूठी देने वाले को देर तक आश्चर्यजनक दृष्टि से

देखता रहा। अंत को पूछा तुम कौन हो? कहां से आये हो? अंगूठी कहां पाई? यहां आने का क्या कारण है?

आदमी—अन्नदाता! मैं हड़मति हूँ।

राखंगार—हड़मति! मैंने कभी यह नाम अवश्य सुना है। सम्भव है तुमको देखा भी हो। इस समय याद नहीं आता।

दूध का जला छाछ फूंक २ कर पीता है। आग से डरा हुआ ठंडे कोयले को भी हाथ लगाने से झिझकता है। इसके होश हवास उड़ गये! कहीं भाग्य यहां भी नया रंग न दिखलाये। सँभल कर कहा। अन्नदाता! यह अंगूठी आपने रानक देवी को दी थी। उसने मुझे आपके पास भेजा है। आपका आयषु था कि जब किसी प्रकार की आवश्यकता हो इसकी सहायता से तू दरबार में आसकेगी।

राखंगार—रानकदेवी कौन है?

हड़मति—मेरी कन्या है।

राखंगार—तुम्हारी कन्या!

हड़मति—हां श्री महाराज! मेरी कन्या।

राखंगार—तुम कौन हो?

हड़मति—कुम्हार।

राखंगार—मैंने कभी हड़मति की कन्या को अंगूठी नहीं दी थी। आखिर उसके देने का कोई कारण भी तो हो। सम्भव है मैं भूल गया हूं।

हड़मति—अन्नदाताजी! जब आप मजीबड़ी में गये थे। तो रानक देवी को देखा था। उसका हाल पूछा था और यह अँगूठी उसे दी थी।

राखंगार—बड़े आश्चर्य की बात है! वह कन्या कहां है! उसे पेश क्यों नहीं करते!

हड़मति—बाहर गया। रानक देवी को साथ लाया। एक

दिव्य तेज के सांचे में ढली हुई लाल रङ्ग की पुतली सामने आई। नख सिख से सुन्दर! लज्जा और सकुच की साक्षात मूर्ति! सादगी की भोली भाली सूरत! उसे देख कर सब चकित रह गये! राखङ्गार ने इस सौंदर्य की वाटिका की उस बिना खिली हुई कली को देखा था। अब उसमें खिलने वाले फूल के रंग व सुगन्धि की छटा उभर आई थी। प्रकृति की रङ्ग देने वाली शक्ति ने उसके रूप स्वरूप की पंखड़ियों में ऐसे सौन्दर्य का नव योवन, अपनी चित्रकारी की अद्भुत छटा प्रगट कर रक्खी थी कि देखने वाले की आंख देर तक उसको निहारने से तृप्ति नहीं होना चाहती थी। राखंगार ने उसे देखा। पुरानी बातें धीरे २ ध्यान में आने लगीं। वेशल की ओर देखा। वेशल! तुमको याद है कि यह हड़मति कौन है?

वेशल—हां अन्नदाता! यह कुम्हार है। मजीबड़ी में इसकी लड़की भांड़े बरतन लाई थी। क्यों वेशल तुमको कुछ याद है?

वेशल—क्यों नहीं! वही रँग वही रूप। मनुष्य ऐसी मूर्ति को यदि एक बार देखले तो फिर सारी आयु पर्यन्त नहीं भूल सकता।

राखंगार—सुन्दरी! तू किस अभिप्राय से जूनागढ़ में आई है?

रानकदेवी—सकुची सिर को नीचा करके उत्तर दिया। सरकार की चाकरनी बनने के लिये। जिस समय आपको मैंने देखा था यह प्रण कर लिया था कि या तो महाराज की सेवा आयु पर्यन्त करूंगी या संसार को त्याग कर ईश्वर की याद में रहूंगी। अन्नदाता जी! मेरे ईश्वर भी हैं यदि शारीरिक सेवा का सौभाग्य मिला तो अहो भाग्य! वरन् आत्मिक दृष्टि से आपकी मानसिक मूर्ति को ध्यान में रख कर उसकी आरती उतारती रहूँगी।

राखंगार—फिर चकित हुआ ! वेशल से पूछा तुम समझते हो यह क्या कह रही है ?

वेशल—निःसंदेह । सौन्दर्य और शील स्वभाव के कारण यह किसी राजा के महल की शोभा हो सकती है । हां सौन्दर्य की जाति का विचार ध्यान देने योग्य है ।

देशल ! तुम्हारी क्या सम्मति है ?

देशल—मैंने मजीवड़ी में भी महाराज से कह दिया था कि धन, कन्या, विद्या और जवाहरात को जहां से हाथ लगें अवश्य लेना उचित है । शास्त्र ऐसा ही कहते हैं । राजा साहब शायद उन बातों को भूल गये ।

राखंगार—सुन्दरी ! तू किस हैसियत में किस नाम से और किस प्रकार से मेरी सेवा स्वीकार करेगी ।

रानकदेवी—सकुची, अपना नाम व निशान मेंट कर आपका नाम जपूँगी । अपने सुख चैन का ध्यान छोड़ कर आपके आराम की चिन्ता करूंगी अपने को भूल कर आपकी याद को हरदम ताज़ा रक्खूगी । जो आप खिलायेंगे वह खाऊंगी । जिस नाम से आप बुलायेंगे उसी नाम को सुनकर पास दौड़ती हुई आऊँगी, पांव दबाऊँगी, सेवा करूंगी, आपके चन्द्रमुख को चकोर की भांति निहारती रहूँगी । जिस प्रकार तुच्छ भौंरे कमल के फूल के चारों ओर मंडलाते रहते हैं । इसी प्रकार मैं भी आपके कमल रूपी मुख की शोभा देख रहूंगी । आपकी सेवा और संग को अपना संसार मानूंगी और मरने के बाद भी मेरे चित्त की वृति यह ही रहेगी अथवा मेरी सविनय यह प्रार्थना रहेगी कि जब २ नया जन्म हो आपकी ही भक्ति मेरे मन में बसी रहे ।

राखंगार—हंसा ! तू तो भक्तिनि है ! यदि कहीं यह तेरा भाव ईश्वर की ओर होता तो तू संसार में परम पुनीत भक्त से विख्यात होती । मनुष्य की भक्ति क्या होती है ! इन्द्री विषय

वासना की शारीरिक और पशुवत्! यह कोई बहुमूल्य वस्तु नहीं है।

हड़मति—अन्नदाता! संसार में जितने रूप हैं। सब ईश्वर के हैं जिसको जो रूप भाता है वह ही उसको प्रिय और प्रेम का कारण होता है, उसी से लोक और परलोक के सुधार की आशा की जाती है और ईश्वर उसी रूप से उसकी मनोकामना पूर्ण करता है। सारी बात मन की लगन और उसकी शुद्धताई पर निर्भर है। ईश्वर जिसको जिस रूप से मिला है। इसी संसार से मिला है किसी ने उससे पुत्र के रूप में प्रेम किया किसी ने माता मान कर पूजा। किसी ने पिता को अपना ईश्वर मान लिया। पतिव्रता स्त्री का पति उसका सच्चा ईश्वर है। फ़क़ीर और साधू गुरु को ईश्वर रूप मानते हैं। कृष्ण भगवान किसी के मित्र थे, किसी के गुरु, किसी के नातेदार और सबको उनकी भक्ति का फल मिला। इसी प्रकार यदि आप किसी की दृष्टि में राजा हैं, मित्र हैं, पुत्र हैं, तो ऐसे भी तो लोग होंगे जो आपको ईश्वर मानते होंगे। भक्ति केवल मानने का ही नाम है। जो मनुष्य इस नियम का पालन नहीं करते हैं वह आयु पर्यन्त ईश्वर २ और राम २ कहते हुये मरजाते हैं। उनमें न आत्मिक फुरना होती है न उनको भक्ति का फल प्राप्त होता है।

राखंगार—पिता पुत्री दोनों ही भक्ति के रंग में रंगे हुये हैं। आज मेरे दरबार में इस प्रकार के उपदेश का व्याख्यान हो रहा है जो संसार में शायद किसी ने सुना होगा। हड़मति तुम्हारा बिचार मिथ्या है। मैं देश का राज्याधिकारी हूँ। मुझे प्रजा की रीतिरस्म रिवाज, चलन और मर्यादा का पग २ पर ध्यान रहता है। चाहे मैं तुम्हारा मान आदर करता हूं और हितचित से रानकदेवी के सुन्दर रूप और सुशील स्वभाव पर मोहित हूँ पर जिस बिचार से तुम उसे यहां लाये हो उसकी सम्भावना कठिन है।

हड़मति—अन्नदाता की यह आज्ञा थी कि बिना मेरी

आज्ञा के यह कन्या किसी को न दीजाय।

राखंगार—यह सत्य है। अब मुझे याद आ गया। सम्भव है मैंने और किसी अभिप्राय से यह बात कही होगी। मैं उसका प्रबन्ध करदूंगा। निश्चिन्त रहो!

हड़मति—परन्तु रानक देवी और किसी प्रकार संतुष्ट न होगी।

राखेंगार—वह लड़की है जो कोई लड़कियों को समझा बुझादे वह उसी तरह की बातें करती हैं। मैं उसे समझाऊंगा और यह सहज में ही मान जायगी।

हड़मति—मैं नीच जाति का मनुष्य हूँ। अन्नदाता के बचनों का खण्डन और मण्डन नहीं कर सकता। मेरा विचार स्वयं और तरह का था। पर रानक न मानी। यहां तक कि उसे सिद्ध-राज तक के महल में जाना रुचिकर नहीं है और वह स्वयं इसका इच्छुक भी है। मुझपर मजीवड़ी में कठोरता का बर्ताव भी किया गया। लड़की की हठ देखकर मैं यहां रातों रात भाग आया। अब इसका भाग्य इसके साथ है। माता पिता जन्म के साथी हैं कर्म के साथी नहीं हैं।

राखंगार—यह तो कोई और ही गुल खिला! क्या यह सत्य है जो तुम कह रहे हो?

हड़मति—अन्नदाताजी! यह अक्षरशः सत्य है।

राखंगार—यह अन्धेर है कि सिद्धराज और उसके आदमी मेरी प्रजा के साथ इस प्रकार कठोरता का व्यवहार करने का साहस करते हैं। पर मुझे इसकी सूचना क्यों नहीं दीगई।

हड़मति—यह काम उस राजा के आदमी गुप्तरीति से कर रहे थे। सेठ करमचन्द टेकचन्द, साधू कृष्णदास और सिद्धराज के रनमल आदि भाटोंके अतिरिक्त यह भेद और किसी को मालूम नहीं है। जब मैं न माना तो वह कठोरता से बात चीत करने

लगे। मैं डरा और घरबार छोड़कर आपकी शरण ली। रानकबेटी तू क्यों नहीं महाराज से अपना हाल कहती। यह ही तो समय वार्तालाप का है! संकोच किस काम का! घड़ी में घर जले ढाई घड़ी का सूतक!

रानक—मुझे जो कुछ विनय करनी थी कर चुकी। लड़कियों को अधिक बात चीत करना लज्जा की बात है। भाग्य ने मुझे निरलज्ज बनने को उत्साहित किया। सिंह की चाल एक होती है। बड़े आदमियों का बचन एक होता है। केला एक बार ही फलता है। राजपूतिनी एक बार ही ब्याही जाती हैं। मैं राजपूतनी हूं। अपने आपको क्षत्री कुल से समझती हूँ। जो प्रण ठन गया, ठन गया। यदि श्री महाराज मुझे अपनी सेवा या अपनी दासी बनाने से असहमत हैं तो मेरा कोई अधिकार उन पर नहीं है। जिस प्रकार पारवती ने कहा था कि "वरूँ शम्भु नत रहूँ कुमारी" वह ही मेरी भी दशा है। यदि उनका अनुग्रह नहीं है तो जाने दीजिये। मैं किसी बन में जाकर तपस्या करूंगी। उनका नाम लेकर जीऊँगी या मरूँगी। इस जीवन में अब प्रण का त्याग और पथ भ्रष्ट नहीं हो सकती। जो मन में ठन गई, ठन गई। आप राजा से आज्ञा लें और घर को पधारें। मुझे मेरे भाग्य पर छोड़ें जो होना था हो चुका।

राखंगार—सुन्दरी! तू राजपूतनी है क्या तू कुम्हार की पुत्री नहीं है।

रानक—आत्मा तो आत्मा है। वह शरीर के बन्धन में आकर शारीरिक कहलाता है। मन के घाट पर बैठकर मानसिक हो जाता है। मिट्टी मन्दिरों की दीवारों में भी लगाई जाती है। और उससे दूसरी इमारतें भी बनाई जाती हैं। मिट्टी तो वास्तव में मिट्टी ही है। उसके रूप में क्या अन्तर होता है।

राखंगार—आश्चर्य है! तू अलंकार की वाणी बोलती है।

प्रश्न का उत्तर नहीं देती। मैं तो भूल गया हूं।

रानक—मैं दीन अलंकार या आध्यात्म विषय को क्या जानूं यह शीश समीप है। उसे अपने कर कमलों से काट दीजिये। इसकी सर्वोत्तम गति होगी। यदि इस शीश को आपके चरण कमलों में नवने का अवसर प्रदान नहीं होता तो यह व्यर्थ का गर्दन का भार है। जितनी जल्दी यह उतर जाय उतना ही इसका भला है। मैं क्या विनय करूं। इससे अधिक और कुछ प्रार्थना नहीं कर सकती।

राखंगार—के चित्त में रानक की प्रतिष्ठा उत्पन्न हुई। प्रेम का अभाव तो उसमें भी नहीं था। केवल साधारण बातें कह रहा था। वह अति आश्चर्य चकित रह गया। हड़मति से पूछा यह क्या कह रही है ?

हड़मति—यह सत्य कह रही है। मैंने प्रथम भी इसके जन्म का हाल अन्नदाता जी को सुनाया था। आप भूल गये। यह सिन्ध देश की राजकुमारी है अहो भाग्य या दुर्भाग्य से मेरे हाथ लगी। सन्तान न होने के कारण मैंने इसका पालन पोषण किया। सिन्ध से कच्छ में आया। वहां का राजा इसे अपने महल में रखने का अभिलाषी था। मैं भय वश भाग आया। मजीवड़ी में भी फिर वह ही घटना घटी। अब यहां आया हूं। इसका भाग्य मुझे सौ सौ नाच नचा रहा है। देखिये अब क्या होनी है !

राखंगार—हां ! हां ! मुझे याद आगया। विश्वास रक्खो यह लड़की अमोल रत्न है ! क्यों वेशल तुम क्या कहते हो ?

वेशल—निश्चय ही अन्नदाता जी ! घर आई हुई लक्ष्मी की कौन अवहेलना करेगा ! देशल ! तुम भी मुझ से सहमत हो कि नहीं !

देशल—जी से और जान से। हम दोनों प्रथम ही महाराज से कह चुके हैं।

राखंगार—हड़मति ! सहर्ष रानक को मुझे देदो। वह मेरी पटरानी होगी। विश्वास रक्खो मैं शुभ महूर्त में उससे विवाह करूँगा। तुम्हारे विश्राम का प्रबन्ध वेशल कर देंगे।

वेशल—मैं इनके लिये अच्छे घर का प्रबन्ध करूँगा। क्यों देशल ! तुम्हारी दृष्टि में कोई अच्छा सा घर नगर में है जिसमें हड़मति को विश्राम कराया जाय।

देशल—क्यों नही हज़ारों मकान मिल सकते हैं। सेठ करमचंद टेकचंद की कोठी से मिला हुआ एक सुन्दर मकान मौजूद है।

हड़मति—अन्नदाता ! अब मुझे सोरठ देश से चले जाने की आज्ञा मिले।

राखंगार—यह क्यों ?

हड़मति—जिस नगर में लड़की ब्याही जाती है वहां का अन्न जल माता पिता नहीं करते। यह प्राचीन समय से हम हिन्दुओं का नियम चला आता है। अब फिर सिन्ध देश चला जाऊँगा।

राखंगार—ने उसे बहुत कुछ द्रव्य देना चाहा ! पर उस निःस्वार्थ और सच्चे धर्मावलम्बी हिंदू ने उससे कुछ नहीं लिया और बिदा होकर उसी दिन वहां से कूच किया और अपनी जन्म भूमि को चला गया। इसके उपरान्त उसकी क्या दशा हुई गुजरात का इतिहास उसकी कुछ साक्षी नहीं देता।

रानकदेवी—के साथ राखंगार ने विवाह कर लिया। अब तक वह स्वयं कुआंरा था और विवाह के पश्चात् भी उसने अन्य स्त्री का ध्यान नहीं किया। क्यों कि धर्म परायणता अथवा नियम बद्ध होने के कारण उसने एक ही स्त्री पर संतोष किया। एक नारी सदा ब्रह्मचारी का वृत ग्रहण किया। इस सम्बन्ध से पति और पत्नी दोनों प्रसन्न थे। समय पर रानकदेवी के दो पुत्रों का जन्म हुआ।

और उसकी पति भक्ति ने राखंगार की दृष्टि में संसार को स्वर्ग धाम बना दिया।

चौदहवां अध्याय

हसरत अथवा पश्चाताप

"दस्त हसरत मलते हैं नादान नाकामी से सब"।

व्यवहार में, प्रतिभास में, और परमार्थ में सफलता केवल उनके भाग में आती है जिसका या तो भाग्य अच्छा है या जिनका चित्त किसी वस्तु के प्राप्त करने को दृढ़ प्रतिज्ञ होता है अथवा हृदय में तीव्र लालसा होती है। जिनके हृदय में झिझक, निर्बलता, और उदासीनता होती है उनको इष्ट सिद्ध की प्राप्ति नहीं होती। यदि किसी साधारण सूफी की दृष्टि शरीर मांस मज्जा ही तक सीमित है तो वह (रूहानी) यानी परमार्थी विषय, परमानन्द की प्राप्ति अथवा इष्ट सिद्धि क्या खाक करेगा। सूफी को मुरशद (गुरु) का पुजारी होना चाहिये। मुरशद (गुरु) इष्ट पद का नाम है। इन्द्री, मन और शरीर की मिलोनी की बन्धन की दशा को गुरु मानना भारी भूल है। एक नये सीखतर सूफी को सन्तान की ओर से कुछ शोक हुआ। उसने अपने गुरू को लिखा। हज़रत! यदि आपकी सन्तान को कुछ कष्ट होता तो होश ठीक न रहते! इस नादान और अनाड़ी शिष्य की दृष्टि अभी ऊँची नहीं हुई। वह आत्मिक पुजारी नहीं है। वह शरीर का पुजारी है। इसको गुरू से मानुषी फल की प्राप्ति तो सम्भव है होजाय पर वह परमार्थी कठिनाई से होगा। यह परमार्थ का उदाहरण है। इसी के समान संसारी और मानसिक सम्बन्धों को भी समझ लो। यहां हर तीनों सम्बन्धों में दृढ़ प्रतिज्ञ अथवा पूर्ण रूप से स्थिर चित्त होने की आवश्यकता है और सफलता और असफलता का आधार केवल मन की गढ़त अथवा स्थिरता है।

सिद्धराज निमय विरुद्ध काम करने वाला था काम वासना ने उस के मन को अपने आधीन बना रक्खा था। वह एक पतिव्रता स्त्री को किस प्रकार पा सकता था। यह व्यवहार का उदाहरण है।

रनमल को जो विचार हुआ कि वह अपने राजा को पद्मिनी स्त्री लाये। उसके निजी, मानसिक विचारों में वह दृढ़ता नहीं हो सकती थी जो एक सच्चे निष्काम जिज्ञासु का स्वाभाविक गुण है इस कारण वह असफल रहा।

परमार्थ अध्यात्म विषय है। प्रतिभास मानसिक विषय है और व्यवहार शारीरिक षिषय या सम्बन्ध है।

रनमल ने भेष बदलकर सोरठ देश का खूब दौरा किया तब जाकर उस समय उसे रानक के विवाह का समाचार मिला और उसके सन्तान भी हो चुकी थी। चित में ईर्षा उत्पन्न हुई। उसके चारों साथी भी मिले जो उसकी पूरी खोज कर रहे थे। वे भी आश्चर्य और पछितावे के साथ शोक में डूब गये! राखंगार को पदमिनी की खोज नहीं थी मगर वह उसे मिल गई क्योंकि प्रकृति की दृष्टि उसके सदाचार पर थी। सिद्धराज असफल रहा क्योंकि न वह उसके लिए हार्दिक इच्छा रखता था और न उसका अभिलाषी ही था। रनमल अपने लिये नहीं बल्कि दूसरे के लिये केवल संसारी लोभ लालच से काम कर रहा था। उसको असफल होना ही था। पांच आदमियों ने आपस में सलाह की और पाटन देश की ओर लौट आये। सिद्धराज की सेवा में हाज़िर हुये।

उसने पूछा कहो क्या हुआ?

रनमल ने उत्तर दिया।

क़िस्मत पै उस मुसाफ़िरे बेकस के रोइये।
जो आके थक गया हो मंज़िल के सामने॥

सिद्धराज—बात क्या है?

क़िस्मत की बदनसीबी से टूटी है कहां कमंद।
दो चार हाथ जब कि लबे बाम रह गये॥

सिद्धराज—तुम हाल सुनाते हो या शायरी कर रहे हो!

रनमल—अन्नदाता! ग़ज़ब होगया! हाथ में आई हुई पद्मिनी निकल गई। कष्ट क्लेश मुझे भोगना पड़ा और आपको निराशा हुई।

सिद्धराज—तुम नादान हो! मैं पहले ही जानता था कि तुम्हारा ख्याल व्यर्थ है।

रनमल—हजूर का ख्याल ग़लत है। न हर मर्द को मर्द कहना सही है न हर स्त्री को स्त्री कहना ठीक है।

जो पंजे में हैं उँगलियां पांच हजरत।
बनातीं कहां उनको इकसां है क़ुदरत॥

सिद्धराज—अच्छा पद्मिनी को कौन लूट ले गया।

रनमल—राखंगार जूनागढ़ का राजा।

सिद्धराज—यह क्या उसे मालूम था कि मैं उसका इच्छुक हूं?

रनमल—वह हर बात से परिचित था। रानक पद्मिनी के लिये आपकी ओर से संदेश दिया गया। इसका पिता खबर नहीं क्यों उसे जूनागढ़ भगा लेगया। उसने आपके आदमियों की शिकायत की। राखंगार क्रोधित हुआ और आप उसने रानक के साथ शादी करली। और मेरा सब किया कराया नष्ट होगया।

सिद्धराज का मुख क्रोध से तमतमा गया। राखंगार का यह साहस कि जो स्त्री मेरे लिये नियत की गई थी वह उसे उड़ा ले जाय। बहुत अच्छा उसे इस अपराध का दण्ड भोगना पड़ेगा। अगर जूनागढ़ की ईंट से ईंट बजादूँ तब तो मेरा नाम सिद्धराज है। उसकी क्या शक्ति है कि वह मेरे सम्मुख आसके। उसने

बड़ी नीचता का काम किया है और मैं बिना दण्ड दिये न छोड़ूंगा।

रनमल—काम तो उसने ऐसा ही किया है!

सिद्धराज—क्या उसके हालात तुमको मालूम हैं।

रनमल—मैं सब जानता हूँ। वह बुरा मनुष्य तो है नहीं न्यायकारी और दानी तो वह सब देश में विख्यात है। प्रजा पालक दीनदयाल, बुद्धिमानों का मान आदर करने वाला! मगर यह अपराध उसने निसन्देह क्षमा करने योग्य नहीं किया।

सिद्धराज—मेरे समीप शत्रु के सद्गुण मत बखानो। मैं तुमसे पूछता हूँ कि उसकी सैना और खजाने का क्या हाल है? इस समय मुझे केवल उसके बल के अनुमान करने का विचार है।

रनमल—इस समय उसकी सैना का प्रबन्ध ठीक नहीं है। इस ओर से वह उदासीन है। खजाने आदि का काम तो सेठ करमचन्द टेकचन्द के किसी नातेदार के आधीन है, वह उसका खाजान्ची है। करमचन्द टेकचन्द मेरे काम में शरीक था। उसे भी दुख हुआ। वह सदैव अन्नदाता की ओर रहेगा। हां, यदि कुछ भय है तो दयासिंह सैनापति का है वह राखंगार का हितैषी मित्र है।

सिद्धराज—क्या कोई स्याना मनुष्य राखंगार के दरबार में ऐसा नहीं है जो हमारी ओर हो जाय और सारे हालात से परिचित करा सके।

रनमल—हां, दो आदमी ऐसे भी हैं। मैं छिपे चोरी उनसे मिला था। पर इस विषय में उनसे वार्तालाप नहीं हुआ। मगर अन्नदाता ने उनके इलाक़े ले लिये हैं। उनकी इच्छा है कि किसी तरह उनकी जागीर वापिस दे दी जाय। यदि यह लोभ दिया जायगा तो वे आपके सहायक बन जायेंगे। इसमें तनिक भी संदेह नहीं है।

सिद्धराज—उनके नाम क्या हैं ?

रनमल—वेशल और देशल।

सिद्धराज—हां, मुझे याद आया वह मनेल देवी के पुत्र और मेरे नातेदार भी होते हैं। तुम उनको अपनी ओर करलो। मैं उनकी जागीर वापिस दे दूंगा। वह राखंगार की नाक के बाल कहलाते हैं। यदि वह हमारे सहायक होजांय तो क्या कहना है!

रनमल—उनको मैं चुटकी बजाते अपने पक्ष में और सहायक बना सकता हूँ।

सिद्धराज—तो आज तुम आराम करो। कल सोरठ देश को चले जाओ। जब तुम वहां से पत्र लिखोगे मैं स्वयं सैना लेकर जूनागढ़ पहुँच जाऊँगा और राखंगार का नाम निशान संसार से मिटा दूंगा।

रनमल—सत बचन!

रनमल आशीर्वाद देकर चला गया। सिद्धराज अकेले में बैठा हुआ सोचने लगा। ऐसी सुन्दर कामिनी और मुझे न मिले। राखंगार बीच में ही कूद पड़े और मुझे निराश करदे। रानक पद्मिनी पर मेरा हक़ है। मेरे लिये पहले संदेश दिया गया। उसका क्या हक़ था। खैर! अब भी मैं उससे अपने महल की शोभा बढ़ाऊँगा और पद्मिनी का पति कहलाऊंगा। सिद्धराज के समीप आने की किसमें शक्ति है। ऐसे सैकड़ों राखंगार को मैं धूल में मिला सकता हूँ।

वह इसी चिन्ता में था कि दरबान ने ख़बर दी कि माता जी आ रही हैं। सिद्धराज उठा माता के पांव पड़ा। आंखों के पलकों से उसके चरणों की रज साफ़ की और जब माता आकर बैठ गई आदर सनमान के कारण वह खड़ा रहा। उसकी आज्ञा पाकर तब बैठा। इस देवी का नाम इतिहास में मैंनल देवी विख्यात है। यह परम पुनीत और पतिव्रता देवी हुई है।

मैनलदेवी ने पूछा पुत्र ! आज तुम इस प्रकार चिन्ता में क्यों हो?

सिद्धराज—कुछ नहीं।

मैनलदेवी—कुछ तो ज़रूर है। नेत्र क्रोध से लाल हैं। होंट तिलमिला रहे हैं। हाथ पैर में असाधारण कपकपी है। मैं तुम्हारी माता हूँ। तुम मेरे आज्ञाकारी पुत्र हो। मुझ से अपना हाल क्या छिपाते हो। क्या तुम नहीं जानते कि जब से तुम्हारे पिता परलोक सिधारे मैंने तुम्हारा पालन पोषण किया। अपने सूत सलाह से तुम्हारे राज को बढ़ाया मैं ही तो यथार्थ में तुम्हारी सच्ची मंत्री हूं मुझ से तुम क्यों भेद छिपाते हो ?

सिद्धराज—बहुत सी बातें ऐसी होती हैं जिनका हाल माता पिता के समीप शिष्टाचार के विरुद्ध समझा जाता है।

मैनलदेवी—पुत्र ! बातें न बनाओ। तुम जानते हो कि मेरी दृष्टि सदैव तुम्हारे कार्यों पर रहती है। माता औरों से अधिक अपने पुत्र को पहँचानती है।

सिद्धराज। हाथ जोड़कर मातेश्वरी ! क्या तुम मुझे बुरा भला कहने आई हो।

मैनलदेवी—नहीं मैं तुमको सदमार्ग दिखाने आई हूँ।

सिद्धराज—हाथ जोड़ कर। मैं तुम्हारा पुत्र ही नहीं हूँ मैं तुम्हारा भक्त भी हूं। क्या मातेश्वरी ! मुझे अपने निजी काम में भी कुछ आज़ादी प्रदान न करेगी।

मैनलदेवी—पुत्र ! मैं तुमको खूब जानती हूं। तुमही मेरी आंखों के तारे हो। तुमसे अधिक प्यारा मुझे कौन हो सकता है ! तुमको मैंने बन्धन में कब रक्खा है। तुम राजा हो, हाकिम हो, मैं चाहे तुम्हारी माता हूँ पर मेरी हैसियत फिर भी प्रजा की है। मैं तुम्हारी आज़ादी कैसे छीन सकती हूं। यह विचार नितान्त मिथ्या है।

सिद्धराज—फिर दुबारा माता के चरणों में पड़ा। उसने उसे अपनी छाती से लगा लिया और बोली, पुत्र! कभी कभी तू अनुचित कार्य कर बैठता है। तेरे जीवन का उज्ज्वल चित्र केवल माता की भक्ति है। जब तक मैं जीवित हूँ तुझ पर किसी प्रकार की आंच न आने पायेगी। मेरे बाद चाहे कुछ भी होजाय। मेरा आशीर्वाद तुझे ढाल बनकर हर बला से बचाता रहेगा।

सिद्धराज—मुझे केवल आपके आशीर्वाद की ज़रूरत है।

मैनलदेवी—मैं प्रातः और संध्या समय मालिक से तेरे भले की प्रार्थना करती रहती हूँ।

सिद्धराज—इस समय आप किस अभिप्राय से पधारी हैं?

मैनलदेवी—हंसी! क्या तू अबतक इसको नहीं जानसका।

सिद्धराज—नहीं! और यदि है तो वह भी ठीक २ नहीं।

मैनलदेवी—जो बातें अभी रनमल ने तुझसे कहीं हैं उनसे पूर्ण रूप में परिचित होगई हूँ और मैं इस अभिप्राय से यहाँ आई हूं कि तुझे इस दुष्कर्म से रोकूं।

सिद्धराज—हाय माता! तेने अपने पुत्र के पीछे ऐसे गुप्त-चर लगा रक्खे हैं!?

मैनलदेवी—केवल तेरे सुधार के विचार से। यदि तू मेरी रोक टोक को पसंद नहीं करता तो मुझे आज्ञा दे मैं काशी की बासी बनूं और वहां ही इस शरीर का त्याग करूँ।

सिद्धराज—नहीं २ मेरी यह भावना नहीं है।

मैनलदेवी—तो फिर सुन! राखङ्गार ने कोई भी ग़लती नहीं की। रानकदेवी यथार्थ में पदमिनी है। अब वह तुझे नहीं मिल सकती। उसका हाथ आना असम्भव है। व्यर्थ में लोहू बहाने से तेरे हाथ कुछ न आयेगा।

सिद्धराज—राज्य का विस्तार तो बढ़ेगा।

मैनलदेवी—यदि धर्म, न्याय, और सत्य इस विस्तार में

शामिल हों। वरन् बड़ा राज भी असह्य भार हो जाता है।

सिद्धराज—शास्त्र ऐसा कहते हैं कि राजा, छात्र, धन का पुजारी महाजन इनको कभी भी संतोषी नहीं होना चाहिये। राज, विद्या और धन की हर समय उन्नति होनी उचित है! नहीं तो जहां मनुष्य एक जगह अड़ गया और संतोषी होगया फिर इनका पतन होने लगता है।

मैनलदेवी! मगर धर्म सदैव इस उन्नति के विचार में रहे तब तो पुण्य हैं नहीं तो राज्य, विद्या और धन तीनों ही पाप के हेतु हो जाते हैं। और मनुष्य इनके कारण आपत्ति विपत्ति में पड़ जाता है।

सिद्धराज—मैंने आज तक पद्मिनी नहीं देखी इसलिये ऐसा विचार है।

मैनल—पुत्र! तैने पद्मिनी का दर्शन किया है। देख मैं खुद पद्मिनी हूँ। क्या तुझे विश्वास नहीं है?

सिद्धराज—मगर मेरे महल में तो पद्मिनी नहीं है।

मैनलदेवी—पद्मिनी बड़े भाग्य से मिलती है। तू जिस समय एक सरोवर बना रहा था एक मजूरिन पदमिनी थी। वह अति रूपवान थी। तैने उसे पाप की दृष्टि से देखा वह तेरे हाथ नहीं आई। तेने उसके पति की निर्दोष हत्या करदी। उस मजूरिन ने तत्काल ही तेरे देखते २ कलेजे में कटार भोंक ली। मरगई और मरते समय श्राप दे गई कि इस लम्बे चौड़े सरोवर में जल की एक बूंद भी न ठहरेगी और देख यह सिद्धराज के अत्याचार की दुष्स्मृति रहेगी, देख तो सही लाखों रुपये इस सरोवर में व्यय हुये और वह अब तक जल शून्य है। क्या अब भी तुझे विश्वास नहीं हुआ वह स्त्री पदमिनी ही थी।

सिद्धराज—माता वरदान और श्राप यह धार्मिक ढकोसले हैं। मैं मानता हूँ कि मुझ से अपराध हुआ पर बेबस था।

मैनल देवी—उसी दोष का भागी फिर भी तू बनने चला है। छोड़ दे इस दुष्कर्म को। पर स्त्री को पाप की दृष्टि से देखने पर रावण की सौने की लंका खाक में मिल गई। द्रोपती की मान हानि करने से धृतराष्ट्र और गन्धारी के एक सौ एक पुत्र मारे गये यह शिक्षा है जो मनुष्य इन घटनाओं से सीख सकता है।

पर नारी पैनी छुरी मत कोई करे प्रसंग।
दस मस्तक रावण गये पर नारी के संग॥
पर नारी पैनी छुरी समझ न कीजे आस।
गन्धारी के वंश का होगया सत्यानाश।

सिद्धराज—मातेश्वरी! बस! बस! अब अधिक शिक्षा मत दो राज्य का भार क्या कम है। जो तुम और मेरे दुक्खों को बढ़ाती हो।

मैनल देवी—समझाना मेरा काम है। मैं इससे अधिक और क्या कहूं।

रानी उठ खड़ी हुई। सिद्धराज फिर उसके पांव पड़ा और उसके चरण चूमे और वह महल में चली गई और यह फिर अपनी धुन में लवलीन हो गया।

पन्द्रहवां अध्याय

धावा (हमला)

"हैं वहम ही से अज़ाब व सवाब के हमले"

सिद्धराज—अहंकारी, मदमाता और मनचाही करने वाला मनुष्य था। जिस समय उस पर किसी भ्रम का भूत चढ़ता था वह किसी की नहीं सुनता था। मंत्री, वज़ीर, मशीर, अमीर उमरा को तो वह घास के तिनकों के समान भी नहीं समझता था। यह ही कारण है कि उसके दरबारी जानबूझ कर भी उसकी सम्मति का विरोध कम करते थे। उसे किसी दैवी या संसारी शक्ति का भय

भी न था। यदि वह किसी की बातों को सुन लिया करता था तो वह केवल उसकी माता मैनलदेवी थी। माता की भक्ति उसके जीवन का उज्ज्वल अङ्ग था। उसका प्रभाव किसी सीमा तक निश्चय ही रहा करता था। पर जब कभी माता को अपने विचार से असहमत पाता अपना काम राजनीति और चालाकी से निकाल लेता। इस कारण सिवाय साधारण राज काज के वह उसकी सम्मति से काम नहीं किया करता था। इस अवसर पर भी उसने चतुराई की। रनमल को रात के समय बुलाकर अपने तौर पर उलटा सीधा समझाया। राखंगार के आदमियों को बहकाने, लोभ देने और उस निर्दोष की सैना में फूट डालने की राय दी। रनमल को तो उसने उसी रात दो चार मनुष्यों के साथ जूनागढ़ की ओर भेजा और आप भी शिकार के बहाने योधा राजपूतों को लेकर दूसरी सुबह को कूच कर दिया। और सैनापति को आदेश दिया कि दो चार दिन बाद भारी सैना लेकर सोरठ देश की ओर आ जाय।

यह सिद्धराज का भ्रम था। राखंगार का वास्तव में इस विषय में कोई दोष न था। पर किसी के भ्रम को क्या किया जाय। संसार में हर रोग की औषधि है पर भ्रम का कोई इलाज नहीं है। अच्छे भ्रम से नेकी पैदा होती है। यह इतनी बुरी नहीं है। पर बुरे भ्रम में जो व्यक्ति फंस जाता है वह पहले अपनी हानि कर लेता है फिर और लोगों को हानि पहुँचाने का कारण बनता है। ऐसा भ्रम प्रथम बार भ्रम में आये हुये मनुष्य के चित्त को अपवित्र और मलीन करता है। पाप करने वाला मनुष्य पहले खुद पापी बन लेता है तब उसके मन से पाप की नहर की धार जारी होती है और वह उसके जल में डूब कर औरों के कष्ट कलेश और दुख का कारण होता है।

रनमल ने जूनागढ़ आते ही वेशल और देशल से भेंट

की। उनको पट्टी पढ़ाई। जाल में फंसाया। और जब इस ओर से निश्चित हो गया उसने सिद्धराज के पास आदमी भेजा। यह तो ताक में लगा ही था। सीमा के निकट ही सैर व शिकार में व्यस्त था। चुने हुये सैनिकों को साथ लिये हुये धावा बोल दिया।

राखंगार बे सुध था। उसे क्या खबर थी कि सिर पर दैवी कोप आ रहा है। वह समय और तरह का था। आज कल के समान राजनीति को इतना महत्व नहीं दिया गया था। गुप्तचरों आदि का प्रबन्ध अवश्य था पर अपूर्ण और राजे महाराजे केवल साधारण रूप में चौकस रहते थे। और इसी असावधानी व भूल के कारण बहुत से चालाक, चतुर और बली शत्रु उनको अपना सहज में शिकार बना लेते थे।

राखङ्गार को समाचार मिला कि सिद्धराज की सैना जूनागढ़ की ओर आ रही है। उसे आचर्य हुआ। उसने अपने तौर पर सैनापति को बुलाकर चौकस रहने का आदेश दिया और अपने बड़े पुत्र के जन्म दिवस के उपलक्ष में उस दिन वह खुशी मना रहा था। वह महल में उत्सव में लग रहा था। फिर भी उसे चैन कहां! शत्रु के दल का इस प्रकार बिना जरूरत और बिना सूचना दिये राज्य की सीमा पर नज़र आना उसकी चिन्ता और अशान्ति का मुख्य कारण था।

रानक ने पूछा, प्राण पति! ऐसे आनन्द के समय आपका चित्त उदास और मलीन क्यों दृष्टिगोचर हो रहा है?

राखंगार ने कहा—खबर नहीं सिद्धराज की सैना ने क्यों इकट्ठी होकर जूनागढ़ की ओर आने का इरादा किया है? इस समाचार ने मुझे अधीर और व्याकुल बना रक्खा है।

रानक देवी के कान खड़े हुये। उसको राखंगार की रानी बनने से पहले मजीबड़ी की घटना याद आ गई। वर्षों व्यतीत हो गये थे। अब वह राखंगार की धर्म पत्नी भी हो चुकी थी पर

इस खबर ने उसे भी परेशान कर दिया।

मनुष्य भला चंगा बैठा हुआ है। कभी २ स्वयं ही चिन्ता और शक्ति के विचार उसके चित्त पर अधिकार जमा लेते हैं और वह दुखी हो जाता है। कारण के जानने का प्रयत्न करता है। पर कारण का पता नहीं लगता उसके दो कारण होते हैं। प्रथम किसी और के मन में चिंता और शोक के भाव प्रगट होते हैं और चूँकि उसका मन उस दूसरे के मन के साथ समाहत होता है। समता के नियमाधीन जो मानसिक धार उधर से चलती है स्वाभाविक ही समवृति पाकर उसके मन की ओर आकर्षित होती है और उसे अधीर बना देती है यह प्रकृति का नियम है भले और बुरे विचार दोनों ही किसी के अन्तःकरण से निकल कर प्रथम आकाश मंडल में फैलते हैं और फिर थर थराने वाली गूंज के साथ उनके मन में प्रवेश करने का प्रयत्न करते हैं जो विचार करने वाले मन के साथ समता और समवृति रखते हैं। दूसरा कारण यह है कि जब किसी व्यक्ति के दुर्भाग्य से कोई आपत्ति विपत्ति आने को होती है वह मानसिक रूप में उसकी ओर चलता है और उनके दृष्टि न आने वाले प्रभाव से भयभीत हो जाता है। यह दशा कुछ २ मनुष्यों पर बीतती है क़रीब२बहुत से मनुष्यों को पहले ही से इसकी चेतना हो जाती है। यह हर समझ वाले मनुष्य का अनुभव है।

रानक—प्राणपति ! बात तो अवश्य ही चिन्ता जनक है ! आपने इसका क्या प्रबन्ध किया है ?

राखंगार—मैंने सैनापति को सावधान रहने की आज्ञा दी है।

रानक—सावधानी ही काफ़ी नहीं है। आप अपनी सैना को शस्त्रों से सुसज्जित रहने की आज्ञा दीजिये। और शीघ्र ही नये युवकों की भरती कीजिये। कौन जाने इसकी आड़ में क्या गुप्त भेद है। आपकी प्रजा आज्ञाकारी है। जान देने वाली है। सहानुभूति रखने वाली और दुख सुख की साथी है। सब तत्काल

ही जमा हो जांयगे और अपनी शुभकांक्षा का परिचय देंगे।

वेशल—महाराज आपका ख्याल ग़लत है। रनमल भाट मुझसे मिला था। वह कहता था सिद्धराज सैर व शिकार की ग़रज़ से सरहद के जंगलों में आने वाला है और कोई बात नहीं है। विश्वास रखिये। क्यों देशल तुम क्या कहते हो?

देशल—सच्ची बात है। यह साधारण घटना है। इसमें चिन्ता करने की क्या आवश्यकता है? यदि सिद्धराज का भाव कुभाव होता तो क्या हमारे आदमी पाटन में नहीं हैं। कुछ तो हमको सूचना मिलती।

मनेलदेवी—(वेशल देशल की माता और राखंगार की बहिन) नहीं भाई! नहीं!! तुम अवश्य ही बुद्धिमानी से काम लो। असावधान न रहो। चाहे यह मामूली बात क्यों न हो फिर भी राजा को हर घड़ी चौकस और कुसमय के लिये तैयार रहना चाहिये। सिद्धराज ने इसी तरह चालाकी से मेरे पति की हत्या करदी। मौरूसी इलाक़ा छीन लिया। और यदि तुम न होते तो आज मैं कहीं की न रहती। तुम मेरे सब तरह से जान, प्राण और मान प्रतिष्ठा के रक्षक हो। यह लड़के नादान हैं इनकी बातों पर न जाओ।

राखङ्गार—बहिनजी! तुम्हारा विचार सत्य है। मेरा चित्त मुझे स्वयं सावधान रहने की प्रेरणा कर रहा है। मैं कल प्रातः ही सोरठ देश की प्रजा को जूनागढ़ में एकत्र होने की आज्ञा दूंगा।

वेशल—निश्चय ही सावधान रहना उचित है। पर आज खुशी का दिन है रङ्ग में भंग क्यों डाला जाय। कल प्रातः ही देखा जायगा। मैं खुद सब जगह आदमी भेज कर सरदारों को बुला लूँगा। देशल तुम क्या राय देते हो।

देशल—जो तुम्हारी राय है वह ही मेरी भी राय है। आज खुशी मनाओ कल प्रातः ही प्रबन्ध कर लिया जायगा।

मैनलदेवी—महाराज ! आप इसी घड़ी जो काम करना हो करो। कल का क्या भरोसा है। कम से कम क़िले की सुरक्षा तो कराइये। और परकोटा पर चारों ओर आदमी तैनात कर दीजिये। जिससे यदि शत्रु की नीयत खराब हो तो उसे घुसने का अवसर न मिसे। और रातों रात जो कुछ करना हो कर डालिये। मुझे कुटिल सिद्धराज का तनिक का विश्वास नहीं है। वह इसी प्रकार धोखे से काम करता है। उसने जितने राजाओं के राज्य छीने हैं ऐसे ही छीने हैं और ऐसे ही लिये हैं। वह धर्मात्मा नहीं है। उसने आज तक कोई धर्म युद्ध नहीं किया। प्रथम वह राजा के आदमियों को लोभ देकर अपनी ओर मिला लेता है फिर उनकी ही सहायता से उनको बल हीन बना कर अपना कार्य सिद्ध करता है।

राखङ्गार—सत्य है मैं उसे ख़ूब जानता हूं।

रानक—तो फिर देर न कीजिये। अभी समय है। अनुभव से लाभ उठाइये। इस उत्सव को समाप्त कीजिये।

सेठ करमचन्द टेकचन्द—अन्नदाता ! आप अधिक चिन्ता न करें। आपका कोष भरपूर है कल प्रातः ही बेशुमार जवान इकट्ठे हो जायेंगे। सिद्धराज इस तरह दूसरे राज्य में दाख़िल नहीं हो सकता। अन्त को वह भी तो राजा है। बिना सोच बिचार के कोई काम न करेगा। उसका सीमा पर आने का और कोई कारण होगा। आप भी तो अपने राज्य में दौरा करते ही रहते हैं। क्या आप अपनी सीमा पर कभी नहीं जाते ? मुझे तो कोई कारण चिन्ता का नहीं मालूम होता।

राखङ्गार—अफ़सोस ! कहां यह शुभ घड़ी ! और कहां यह चिन्ता और आपत्ति विपत्ति ! दीवानजी ! आपकी क्या सम्मति है ?

मंत्री—मैं ख़ुद चकित हूँ। मुझे कुछ दाल में काला ज़रूर नज़र आता है। मेरी समझ में ख़ुद यह बात नहीं आती कि

सिद्धराज के आने का समाचार हमारे कर्मचारियों ने पहले हमको क्यों नहीं दिया। मैं मनेलदेवी की बातों से पूर्ण रूप में सहमत हूं। आपतो खुशी मनाइये। मुझे आज्ञा दीजिये। मैं खुद अपने पुत्रों को और सैनापति को आज क़िले की स्वरक्षा के काम पर तैनात करता हूं। मैं रात भर जागता रहूंगा और कल प्रातः ही स्वयं सैना को ठीक ठाक करने का प्रबन्ध करलूंगा।

वैशल—क्यों न हो धन्यवाद है दीवान साहब आपकी राज्य की सहानभूति पर! क्यों देशल! दीवानजी से अधिक हमारी सरकार का शुभचिन्तक और कौन हो सकता है?

राखंगार—दीवानजी! आप जांय। फ़ौरन क़िले का प्रबंध करें। मैं स्वयं अभी आता हूँ।

वेशल—अन्नदाता! आप यहां ही पधारें। आप पर जान देने वाले क्या कम हैं। जहां आपका पसीना गिरेगा वहां हम अपना लोहू बहादेंगे। आप साल गिरह का महोत्सव मनावें। हम दोनों जाते हैं। क्यों देशल क्या कहते हो?

देशल—ऐसी आपत्ति के समय हमारा उत्सव मनाना व्यर्थ है। जिसका खाइये टूका, उसके गाइये गीता।

मनेलदेवी—हां पुत्रो! यह ही तो नमक के हलाल कर दिखाने का समय है। राखंगार तुम्हारे मामा ही नहीं हैं। अन्नदाता, प्राणदाता, राजा और शरणदाता हैं! यह ही यथार्थ में तुम्हारे पिता हैं। जाओ अपनी बफ़ादारी का सबूत दो।

वेशल देशल भी राजा से बिदा होकर जाने को तो गये पर किसी और नीयत से। इन दोनों भाइयों और खज़ान्ची धर्मचन्द टेकचन्द ने पहरे वाले संत्री वगैरा को बहुत सी शराब इकट्ठी करादी थी। उत्सव का दिन था। तमाम क़िले के सिपाही शराब पी पी कर मदहोश हो रहे थे। अभी दीवान अपने घर जाकर सैनापति और लड़कों को पहरा देने की सलाह दे रहा था कि यह

दोनों फाटक पर पहुँचे सन्त्री ने हांक लगाई। इन्होंने उत्तर दिया हम हैं। बाहर किसी कार्य वश जारहे हैं। संत्री सन्तुष्ट हो गया। वह खुद नशे में था। इतने में किसी ने बाहर से सीटी दी। उन्होंने फाटक खोल दिया। सिद्धराज अपने साथियों के साथ सहज में ही भीतर घुस गया। सिपाहियों को एक एक करके तलवार के घाट उतारा। यह प्रथम ही अंतरंग हो गई थी कि सीटी के सुनते ही क़िले का फाटक खोल दिया जाय। जब पाटन देश के सशस्त्र सिपाही भीतर घुस गये। उन्होंने क़िले की सब सैना को नष्ट कर दिया। खून की नदियां बह निकलीं। सब असावधानी में मारे गये राखङ्गार अभी उत्सव में बैठा हुआ था कि वेशल देशल हांपते हुये पहुंचे। हजूर सिद्धराज आ पहुंचा। गढ़ पर उसकी सैना का अधिकार हो गया। अब भागने का समय नहीं रहा।

उत्सव के राग रंग में ख़बर पड़ते ही भंग पड़ गई। राख-ङ्गार हाथ में तलवार लिये हुये उठा। दरबारी राजपूत भी संभले इतने में सिद्धराज भी वहां आ पहुँचा। स्त्रीयां बेसुध हो गईं। सिद्धराज ललकारा। राखङ्गार! तुझ को यह साहस कैसे हुआ कि मेरी पद्मिनी स्त्री को भगा लाया। संभल जा मैं बदला लेने के लिये काल के समान आ पहुँचा हूं। राखंगार को आश्चर्य हुआ। उसने उत्तर दिया तू झूंठ कहता है। राखंगार को संसार अधर्मी नहीं कह सकता। पर इस उत्तर को कौन सुनता। सिद्धराज ने वार कर ही दिया। दोनों में शपा शप तलवारें चलने लगीं और राजपूत भी लड़ने लगे। दोनों ओर के आदमी सिंह के समान युद्ध करने लगे। राखंगार मारा गया। उसके सब आदमी भी मारे गये। निर्दोष अबलायें खड़ी हुई दुखी होकर दुर्घटना को देखती की देखती रह गईं वेशल देशल आये और इशारों से सिद्धराज और उसके आदमियों को कहा बस बस! अब अधिक मारकाट की आवश्यकता नहीं रही और वह चुप चाप खड़े हो गये।

सोलहवां अध्याय

सत अथवा असमत

"असमत से बढ़ कर दुनियां में कोई नहीं है चीज़"

वेशल ने रानक की ओर देखा। मामी! मामा तो चल बसे। वास्तव में सिद्धराज ही की रानी बनने के लिये तुझे सोचा गया था धोका हो गया। अब संतोष कर। क्यों देशल क्या राय है।

देशल—यह ही कि हक़ हक़दार को मिले। जिसकी चीज़ उसके पास पहुँचे।

रानक—नीच! दुष्ट! पापियो! आस्तीन के सांप! क्या राखंगार ने तुमको इसी दिन के लिए पाला था। और उसने एक मरे हुये राजपूत की खंजर उठाली। और सिद्धराज की ओर लपकी वेशल और देशल दोनों ने ज़बरदस्ती उसके हाथ से तलवार खींच ली। और अबला की मुश्कें कसलीं। वह अबला स्त्री थी क़ाबू में आगई। रानक के दोनों पुत्र बालक तो थे ही, परन्तु माता पिता की मृत्यु और अपमान को सहन न कर सके। एक तो वेशल देशल की ओर झपटा। दूसरे ने सिद्धराज पर हमला किया। पर निर्दई, अत्याचारी और पापी सिद्धराज ने दोनों का बध कर दिया पति मारा गया। सन्तान उसके सामने ही विवश और बाल्य-अवस्था में क़तल की गई। रानक की दुर्दशा का कौन अनुमान लगा सकता है!

उसने भानजों से कहा। निर्दईयो! दुष्टो! भगवान तुमको इस नमक हरामी और अत्याचार का महा कठोर दंड देगा।

वेशल—मामी तू चिंता न कर। तू पाटन देश की रानी होगी। हमको हमारा इलाक़ा मिल जायगा। चाहे घटना कैसी ही दुखद क्यों न हो पर इसमें हमारी सब की भलाई है। यदि एक की बुराई से बहुत से आदमियों की भलाई होती है तो बुद्धिमान

इसकी अवहेलना नहीं करते। क्यों देशल सच है कि नहीं ?

देशल—नितांत सत्य है।

मनेल देवी—आश्चर्य और सोच में इनकी बातों को सुनती रही। उसके पैर पृथ्वी में गढ़ गये थे। उसको निश्चय हो गया कि इस सब उपाधी के मूल यह ही दोनों लड़के हैं। वह इन से बोली। कपूत सन्तान नीच औलाद! तुम मेरी कोख से सांप पैदा हुये।

वैशल नहीं माता नहीं। हमने पिता की ज़ायदाद हासिल करली। क्या सिद्धराज जी हमारे नातेदार नहीं है। क्षत्री सदा कर, छल, बल से काम लेने को बाध्य हैं। सदैव से ऐसा ही होता आया है। कुछ हमने ही तो ऐसा कर्म नहीं किया। क्यों देशल ठीक न है ?

देशल—माता की बुद्धि भ्रष्ट हो गई है। इसको समझ नहीं है।

मनेल—जिस स्त्री के पुत्र ऐसे नीच निकलें उसकी बुद्धि क्यों न भ्रष्ट हो। क्रूरो! दुष्टो! तुम्हारे लोक परलोक दोनों भ्रष्ट हों। तुम कपूत हो! तुम्हारे संसार में पैदा होने की क्या आवश्यकता थी।

वेशल—इसीलिये कि पिता की खोज हुई जायदाद को चालाकी और चतुराई से वापिस ले लें।

क्यों देशल! बोलते क्यों नहीं ?

देशल—निश्चय ही सत्य है।

मनेल—धिक्कार है! ऐसी ज़ायदाद पर जिसका मूल्य खून हो। धिक्कार है! उन जायदाद वालों पर जो अपने हितैषी की जान लेकर ज़ायदाद वाले बनते हैं! धिक्कार है तुम पर जो ऐसे धर्मात्मा स्वामी के लोहू के प्यासे बने। धिक्कार है मुझ पर जिसकी कोख से तुम जन्मे। करोड़ों वर्ष तक तुम घोर नर्क में पड़े रहोगे और निरअपराधी का लोहू तुम्हारे माथे पर कलंक का टीका लगा हुआ

तुमको भ्रष्ट करता रहेगा और मनुष्य तुमको तुम्हारे कलंकित नाम, अपयश, और घोर पाप को याद करके कोसते रहेंगे।

वेशल—क्या चिन्ता है! हम सिद्धराज के तो प्यारे मीठे बने रहेंगे। क्यों देशल! जिस पर राजा की ऐसी कृपा दृष्टि हो उसको और किसी अन्य की क्या चिन्ता है।

देशल—सत्य है। अक्षरसः सत्य है।

मनेल—कुल द्रौही! कुल घातक! निर्लज्ज! अपने हितू का शव सम्मुख पड़ा है। और यह घोर अपराध, अशिष्टाचार, और अत्याचार की बातें हो रही हैं। परे हटो! वरन् में स्वयं तलवार से तुम्हारे शीशों को भुट्टे के समान अभी उड़ा दूंगी।

वेशल—तू सब भूल जायगी। चल रानी बन कर अपने राज्य का काम काज सँभाल ले। संसार में ऐसा होता ही रहता है। क्यों देशल! पचीस गांव राज और देगा कि नही।

देशल—हां जी हां। अपने स्वार्थ के लिये कौन ऐसा नहीं करता। मनेल की अधिक सुनने की शक्ति कहां थी। उसने लपक कर कटार लेली। वेशल देशल दोनों भाग कर सिद्धराज की ओट में जा दबके। मेनल ने कटार अपने कलेजे में भौंक ली। और वहां ही ढेर हो गई।

वेशल—हाय! हाय! मातेश्वरी ने आत्मघात कर लिया। ऐसे अपने आपको नष्ट करने की क्या आवश्यकता थी। देशल! अब क्या करें।

देशल—चलो शव को उठालें। मृतक संस्कार करें। और अब क्या करना है?

सिद्धराज—इन बेईमानों की बातों को बड़े आश्चर्यजनक कानों से सुनता रहा। पर चुप चाप था। मुख नहीं खोला। वह शव को एक ओर को ले गये।

सिद्धराज—रानक से बोला। सुन्दरी मैं निर्दोष हूं।

तेरे प्रेम ने मुझे पागल कर दिया था। तू मेरी थी और मेरी होकर रहेगी। देख कितने प्राणियों के जीवन की आहुति देकर मैंने तुझको मोल लिया है।

रानक—बस बस! घाव पर नमक न छिड़क! रानक जिसकी थी उसकी थी। वह तेरी कहां है और न तेरी हो सकती है। इस तुच्छ विचार को छोड़ और मेरी दृष्टि से परे हटजा। मैंने क्या जाने क्या पहले जन्मों में बुरे कर्म किये थे कि पति के हत्यारे को इन नेत्रों से देख रही हूँ और उसकी अशलील बातों को सुन रही हूँ। मुझे पृथम ही मरजाना था जो अपने सुहाग का डिब्बा हाथ में लिये हुये पति के कर कमलों से दग्ध संस्कार का पुण्य प्राप्त करती। रे नीच! दृष्टि से दूर होजा।

सिद्धराज—राजपूतो! पद्मिनी की मुश्कें खोल दो! इसे दुख लगता होगा। अभी यह होश में नहीं है। समझाने से राह पर आजायेगी। पर अपने पहरे में रक्खो। कोई अकाज न करने पावे। और राजपूतों ने वैसा ही किया।

सत्रहवां अध्याय

शान इलाही (मालिक की मौज, इच्छा)!

"हर शै में शान इलाही का है जलवा"

क़िले में थोड़ी ही देर में अधिकार हो गया। सिद्धराज के सैनिक अध्यक्षों ने फाटकों और परकोटा पर अपने सैनिक तैनात कर दिये। अभी आधी रात से अधिक नहीं बीती थी। लोगों को इस घटना के पढ़ने से आश्चर्य होगा कि किस प्रकार दो चार घंटों के भीतर एक भरे पूरे राज्य का पतन हो गया और वह एक शासक के हाथ से निकल कर दूसरे के आधीन हो गया। इस प्रकार की घटनायें इस हिन्दुस्तान में अधिकांश हो चुकी हैं। मनुष्य अधिकतर अपनी असावधानी से मारा जाता है। राखंगार धर्मात्मा

शासक था। उसे अपने सदभावों पर गर्व था। वह हर हालत में अपने आप को स्वरक्षित समझता था। पर राजा में सदाचार के अतिरिक्त और गुणोंकी भी आवश्यकता है। जिस प्रकार राजयोगी साधन और अभ्यास करता हुआ अपने मानसिक भावों के एक२ विचार पर दृष्टि रखता है वैसे ही राजा का भी धर्म है कि वह हर भाग के मनुष्यों के विचारों की ओर ध्यान रक्खे ताकि कोई व्यक्ति उसे धोखा न दे सके। योग का साधन महा कठिन है पर उस से भी अधिक कठिन साधन देश के शासन का है। जब तक योगी इन्द्रियों और मन को भले प्रकार वश में न करले हर समय उसके गिरने का भय बना रहता है। इसी प्रकार यदि राजा मनुष्यों के स्वभाव से अपरचित, अनुभव हीन और अपनी प्रजा के भाव विचारों को न जानता हुआ दृष्टि नहीं रखता तो उसका भी कुशल नहीं है राजा के वास्तव में कोई सगे सम्बन्धी नहीं हैं। वह सब को अपने स्वार्थ के आधीन बना रखता है। यहां राखंगार ने वेशल और देशल के सम्बन्ध में भारी भूल की। असावधान रहा और मारा गया। घर का भेदी लंका ढावे। उसकी भी सोने की लंका खाक में मिल गई! और कैसी सहज रीति में?

दीवान सैनापति और सौ पचास सैनिक लेकर क़िले के फाटक पर पहुँचा। आवाज़ दी पर किसी ने दरवाज़ा नहीं खोला परकोटे पर सिद्धराज के आदमी उनको देखा करें। आज्ञा थी कि सुबह से पहले फाटक न खुले और न बाहर वालों को खबर होने पावे कि भीतर क्या हो रहा है। यह सब चकित थे। कोई बात समझ में नहीं आई। विवश होकर इन्होंने फाटक के ही किनारे रात काटने का इरादा किया। राखंगार के आदमी सम्भव नहीं था कि उनको न सुनते। शहर में डाका पड़ता है और हुल्लड़ सा मच जाता है। डाकू बाजे बजाते आते है। और लूट मार कर चले जाते हैं। पर यहां विचित्र प्रकार की घटना हुई। शत्रु अपने

आदमियों को चुपके २ लाया। मुक़ाबला करने वालों को तलवार के घाट उतारा और बाहर किसी को कानों कान ख़बर तक नहीं हुई।

वह मन में अति विचलित थे। ईश्वर जाने क्या भेद है कि कोई बात समझ में नहीं आती। वह इसी सोच फिक्र में थे कि कई सौ आदमियों की भीड़ परकोटे के पास होकर क़िले के निकट आ पहुँची। परकोटे का फाटक भी खुला हुआ था। पहरे वाले वहां भी शराब पी पी कर बद मस्त हो गये थे। जिस समय वेशल देशल ने सिद्धराज के आदमियों को परकोटे के भीतर आने की आज्ञा दी ऐसा प्रतीत होता है वह खुले का खुला रह गया। और अन्य आदमी निडर होकर शहर के भीतर चले गये। पुलिस ने भी रोक टोक नहीं की। यह भी अचेत थे। जब दीवान और सैनापति के आदमियों ने उनके आने का आहट सुना, पूछा। कौन आ रहा है? उत्तर मिला सिद्धराज की खोज में महारानी मैनल देवी थोड़े आदमियों के साथ आई हैं। उनको सूचना दी गई है वह महाराज राखङ्गार जी के क़िले की ओर गये हैं। इस कारण महारानी भी उधर आ गईं। फिर सवाल किया गया शहर के परकोटे का द्वार किसने खोला?

उत्तर मिला। किसी ने भी नहीं वह खुला हुआ था। पहरे पर एक आदमी भी नहीं था।

दीवान और सैनापति दोनों के होश उड़े! यह सलाह की कि रानी से मिलना चाहिये। वह अपने समय की अति पति परायण, ईश्वर भक्तिनि और धर्मात्मा विख्यात थी। दोनों आये। रानी के समीप लाये गये। सलाम किया। अपना नाम बताया। अतिथि सेवा का धर्म पालन करने का विचार प्रगट किया।

रानी ने कहा—मैं तुम्हारे शिष्टाचार और सभ्यता की अति कृतज्ञ हूँ। पर सबसे प्रथम इस प्रश्न का उत्तर चाहती हूँ

कि सिद्धराज कहां हैं ?

दीवान—इसका हमको बिल्कुल ज्ञान नहीं है। आज शाम को यह सूचना मिली थी कि वह सीमार पर शिकार खेलने आये हैं। इससे अधिक हमको नहीं मालूम है।

रानी—रात का समय है। तुम क़िले के बाहर क्यों खड़े हो। और शहर की स्वरक्षा का ध्यान क्यों नहीं रक्खा गया ?

दीवान और सैनापति एक दूसरे का मुँह ताकने लगे। इस सवाल का क्या जवाब देते। वह खुद हैरान थे।

रानी बोली। तुम अचेत हो। मुझे संशय है सिद्धराज इस समय क़िले के भीतर है। तुम्हारी असावधानी क्षमा करने योग्य नहीं है। बहतर है मुझे मेरेपुत्र से भेटने का अभी अवसर दो। जो समय व्यतीत हो रहा है। वह तुम्हारे लिये मेरी उपेक्षा अधिक पश्चाताप कर सिद्ध होगा। अच्छा हो मैं उससे मिलकर दो दो बातें कर लूँ। वरन् मेरा आना नितांत असफल सिद्ध होगा। अभी खैरियत है।

दीवान और सैनापति आश्चर्य चकित होकर चुप थे। उनके चित्त में अनेक प्रकार के भाव उत्पन्न होने लगे। बात बना कर बोले:—आप महमान खाने में पधारें प्रातः ही सारा हाल मालूम हो जायगा।

अब रानी खुद आश्चर्य में हुई। जब तक मुझे सिद्धराज का हाल न मालूम हो जाय मैं तुम्हारी महमानी के स्वीकार करने से इन्कार करती हूँ। वैसे मैं तुम्हारी सभ्यता और आदर भाव की प्रशंसा करती हूं। बहतर है हम लोग इस खुले हुये मैदान में कुछ देर ठहरें। तुम क़िले वालों से पूछो। इसके बाद जो कुछ कहोगे मैं मानूँगी।

मगर क़िला कौन खोलता! वहां तो कुछ और ही प्रबन्ध

होगया था। रात जैसे तैसे कटी। सुबह का तारा चमका। यह समय किले के बुर्ज पर शहनाई और नफीरी बजाने का था। पर वहां सुनसान था। यह भी सब के लिए महा आश्चर्य का विषय था। अंत को प्रातः हुआ। अब तक भी फाटक नहीं खुला। दीवान और सैनापति दोनों ने उसके खुलवाने की कोशिश की। बुर्ज के आदमियों ने ऊपर से उत्तर दिया। किले पर महाराज सिद्धराज का अधिकार होगया। जब तक पाटन देश की सैना न आजायगी किला ऐसे ही बन्द रहेगा। ग़ज़ब तो होगया! सेनापति ने सैनिकों को तैयार होने का संकेत किया। रानी ने यह सब हाल मालूम कर लिया। दीवान और सैनापति को बुलाया। अब तुम्हारा करना धरना व्यर्थ है। जिस कुचक्र से मैं तुम्हारी रक्षा करने को आई थी वह घटना हो गई। खेद है मैं देर से आई। तुम चुप रहो इसी में भला है। जो होना था होगया। अब खैरियत इसी में है कि चुपचाप आगे होने वाली घटना का इन्तज़ार करो।

इसके बाद ख़बर मिली। पाटन देश की सैना आगई है। किले वाले इसके इन्तज़ार में थे। फाटक खुल गया और दीवान और सैनापति को सिद्धराज के आदमियों ने घेर लिया। रानी ने बड़ी होशियारी से काम किया। मारकाट की नौबत न आई। और तमाम शहर में मुनादी हो गई। सोरठ देश आज से सिद्धराज के राज्य के आधीन होगया। जो व्यक्ति सरकशी करेगा दण्ड भोगेगा और कठोर से कठोर दण्ड दिया जायगा।

किसमें शक्ति थी कि चूं तक करता! हर जगह निराश और शोक छागया। क़िले पर सिद्धराज का सूर्य छाप झन्डा फहराने लगा। जब उसने सुना कि मैनलदेवी आई है। अपने आदमियों के साथ बाहर आया। अपने स्वभावानुसार माता के चरण स्पर्श किये।

इसने पूछा सिद्धराज यह तुमने क्या किया?

यह बोला जो राजों का दस्तूर है।

रानी—राखंगार का क्या हाल है ?

सिद्धराज—वह मारा गया।

फिर रानी राखंगार के दीवान, सैनापति, कर्मचारी और सब पाटन देश की सैना के साथ क़िले में दाखिल हुये। यहां लाशों के ढेर लगे थे। कुछ सैनिक बन्दी बना लिये गये थे। शेष के शस्त्र छीन लिये गये थे। राजा ने दीवान आदि को आदेश दिया। शस्त्र रख दो ? उन्होंने ऐसा ही किया। विवश थे। क्या कर सकते थे। पर दोनों ही राखङ्गार के सच्चे नमक हलाल अफसर थे। प्रार्थना की हमको यहां से चले जाने की आज्ञा प्रदान हो।

सिद्धराज—क्यों ? तुम रहो मैं तुम्हारे पदों को बनाये रखना चाहता हूँ।

दीवान—जब राखङ्गार नहीं रहा हो तो यहां का अन्न जल अब पाप है। अब फक़ीराना भेष में बन में रह कर तपस्या करेंगे। हम आपके साथ सरकशी करना नहीं चाहते। क्योंकि वह व्यर्थ है।

सिद्धराज—शासन स्थित हो जाने पर तुम्हारी विनय मानी जा सकती है। इस समय तुम नज़र बन्द हो।

इसके उपरान्त लाशों के हटाने का हुक्म दिया गया। और सबके बाद राखंगार का शव आदर सहित बाहर निकाला गया। सिद्धराज के सैनिक अफ़सर उसके साथ थे। उसे वह नदी के किनारे ले गये। विचार था कि कोई उसका रिश्तेदार चिता पर उसके मृतक संस्कार को करे। पर यह सब भय के कारण पहले से ही भाग गये थे इस कारण दाह संस्कार की रस्म कुछ देर के लिये स्थिगत कर दी गई।

यह शान इलाही है ! मालिक की इच्छा है। ताज तख़त की भी संसार में यह दुर्दशा और अवज्ञा होती है। कल जो देशपति माना जाता था आज ख़ाक और ख़ून में लथ पथ पड़ा है। और उसके माल व ख़ज़ाने का दूसरा व्यक्ति मालिक होगया है।

यह संसार की लीला है।

लाया था क्या सिन्कदर दुनियां से ले चला क्या।
थे दोनों हाथ ख़ाली बाहर कफ़न से निकले॥

अठारहवां अध्याय

जनून अथवा बेसुधी, बाबरपन

"इश्क़ का दूसरा है नाम जनून"

निकल भागी! पहरे से निकल गई! सशस्त्र सिपाहियों के पहरे से चली गई। कौन? रानक देवी। निकल भागी। चौकी पहरे से निकल गई। बुद्धि विवेक जाता रहा। तन बदन की सुध बुध न रही। नितांत बेसुध न सिर का होश न पांव की सुध, न तन बदन का ध्यान! न लज्जा व सुकच से काम। वह यकायक ही सबकी आंखों में धूल डाल कर चली गई। किसी को क्या ख़बर! क़िले को देखा। उदासी छाई हुई थी। हर दिशा में शवों के ढेर लगे हुये थे। ठोकर खाकर गिरी।

पर धरते असगुन भया पग में लागी ठेस।
रानक को दुख है बड़ा उजड़े सोरठ देश॥

संभली। फाटक पर पहुँची। क्या यह वह ही पद्मिनी देवी है जिसके हेतु इतना खून बहाया गया! किसी की निगाह इस पर नहीं पड़ी। रानी सादा वस्त्र पहनती थी। साधारण स्त्री की कौन रोक टोक करे। दिल से पूछा मैं कौन हूँ? फिर आप ही उत्तर दिया।

सोरठ देश के गांव में लायो एक कुम्हार।
बेटी राजा सिन्ध की ब्याही राखङ्गार॥

आगे बढ़ी। डेरा खड़ा हुआ था। फिर सवाल किया।

यह किसका रनवास है, किसने तम्बू तानिया
कहां से आया सेठ, कहां का बानिया।

एक सिपाही ने सुना मुस्करा कर जवाब दिया—

लशकर यह सिद्धराज का लूटा सोरठ देश।
मार सहेगा अति घनी राखंगार नरेश।
रानक लाया ब्याह कर किया अधिक अपमान।
रानी श्री सिद्धराज की बना निपट अनजान।

रानक हँसी। ऐसा समरथ को कहां तोड़े गढ़ गिर नार।

राजों में सबसे बली राजा राखंगार।

संयोग से वहां एक सफेद घोड़ा खड़ा था। बावली रानी ने उसे अपने राजा की सवारी का घोड़ा समझा।

बोली:—घोड़ा राखंगार का ज्यों सरवर का हंस।
यहां यह कैसे आगया छोड़ धनी का वंश

दूसरे सिपाही ने बावली समझ कर हँसी में उत्तर दिया—

बाज बिचारा क्या करे गया शिकारी छोड़।
राखंगार तो चल बसा मुख मिन्नन से मोड़।

हैं! कहां गया कैसे गया! हाय!

सारा जग सूना भया देश नगर भया छार।
शोभा तो सब लेगया राजा राखङ्गार।

सिपाही ने उत्तर दिया—वह नदी की ओर गया है,
तब तो मैं भी उसी ओर चलूँगी।

पग बढ़ाये राह में बाग मिला। फूल खिले हुये थे। चम्पा का पेड़ ताज़ी फूलों से लदा हुआ लह लहा रहा था। वृक्ष को दाबा। बहुत से फूल गिर पड़े। इसने चुन लिये। कपड़े के चीर में भर लिये। फिर बोली।

चम्पा तुझ में तीन गुण, रूप रङ्ग और बास।
औगुन तुझ में एक है, भँवर न बैठे पास।
रूप रंग से क्या बने, जामे प्रेम न प्रीति।
भौंरा लोभी प्रेम का, ऐसा कीजै मीत।

मुझ में प्रेम प्रतीत है मुझ में प्रेम प्रभाय।
राखंगार किधर गया, शोभा सकल नसाय।

कभी हंसती थी, कभी मुस्कराती थी कभी रोती थी, पर पग बढ़ाये हुये नदी की ओर चली जा रही थी। कौन जाने राखंगार की मृतक लाश में क्या आकर्षण था। जो उसे अन जाने ही अपनी ओर खींचे हुये ले जारही थी। किसी को क्या खबर कि यह कौन है? कहां जारही है? किस की सुध है। किस भाव में मस्त है। बावली स्त्री की रोक थाम या पकड़ने से किसी को क्या मतलब। लटा छटकी हुई! परेशान सूरत, शकल से वहशत बरसती हुई!

वह लाश पर आई। सिद्धराज के आदमी ठठ के ठठ उसके चारों ओर खड़े हुये थे इन्होंने समझा। सम्भव है यह कोई राखंगार की रानी हो। किसी ने उसे नहीं रोका। उसने उसका कफ़न खोला सूरत देखी। रोई और कहने लगी। प्राण नाथ! यह क्या हुआ? तुम सोरहे हो। जागोगे नहीं। महल को छोड़ कर नदी के तट पर बास किया। यहां की खुली हवा बहुत पसंद आई। पर उत्तर कौन देता। मृतक ने कब उत्तर दिया है? उसने शरीर को हिलाया। गहरी दृष्टि से देखा। विचार हुआ यह शव है जान निकल गई है। खून से लत पत है। हाय! यह क्या हो गया! क्या राखंगार मुझ को सच मुच छोड़ कर चले गये।

स्वामी तो चुप हो रहे अब क्या कीजे राम।
गिरे परवत शिखर से तजे सुख दुख धाम॥
दस द्वारे का पींजड़ा, बंद लगी सब ठौर।
कैसे पंछी उड़ गया हंसों का सिर मौर॥
मुख खोलो कुछ तो कहो राजा राखंगार।
क्षत्र पति सूना पड़ा, जूनागढ़ गिरनार॥

धीरे २ रात की घटना की सुध हो आई। कुछ चेत हुआ लाश से चिपट गई। और धाड़ें मार २ कर विलाप करने लगी।

नगर के नर नारियों ने सुना कि रानी नदी के तट पर चली गई है उसे सब जान और प्राण से प्यार करते थे। मानुषी सहानुभूति का उभार हुआ। इनकी बहुत सी भीड़ उधर आगई। इधर क़िले में भी ख़बर फैल गई कि रानी भाग गई है खोज में आदमी दौड़े भीड़ भाड़ देखकर सिपाहियों ने रानी को लाश पर से हटाया। ज़बरदस्ती एक जगह लाये। जहाँ से गिरनार पर्वत की चोटी नज़र आती थी। रानी के शोक का भाव फिर दुबारा उभर खड़ा हुआ फिर पागलपन ने नया प्रभाव डाला। ऐसे समय की बेसुधी भी प्रकृति की अनुपम दैन है। रानी ने सिर उठाया। पर्वत के शिखर की ओर दृष्टि गई। बोली:—

ऊँचा गढ़ गिरनार का करे गगन सों मेल।
राखंगार तो चल बसा बिगड़ गया सब खेल॥

सिद्धराज को कहां चैन! वह भी लोगों से सुन कर नदी की ओर चल दिया उस नदी का नाम भौगादा है। वह आया रानक को सिर से पैर तक देखा। तेज और सौंदर्य की दिव्य मूर्ति बनकर खड़ी थी। यों तो वह साक्षात सौन्दर्य थी बेसुधी की दशा ने और भी उसके रंग रूप को भड़का रक्खा था। दो चार क्षण गहरी दृष्टि से देखता रहा।

उन्नीसवां अध्याय

इश्क़ सादिक़। सच्चा प्रेम

"इश्क़ सादिक़ में कभी नाम नहीं नग़रिश का"

सिद्धराज ने ज़बान खोली। सुन्दरी! सन्तोष कर। रंज से कोई लाभ न होगा।

रानक—तू कौन है?

सिद्धराज—मैं सिद्धराज पाटन देश का राजा हूँ। तेरा प्रेम मुझे यहां खेंच लाया।

रानक—सिद्धराज ! कौन सिद्ध राज ! वह कौन है मैं तो नहीं जानती ।

सिद्धराज—मैंने ही तेरे वास्ते जान पर मुसीबतें मोल लीं । राखंगार मेरा रक़ीब (प्रतिद्वन्दी) था । उसे ख़ाक में सुला दिया ।

रानक—फिर उन्हें सोने दे । ख़बरदार उनको जगाना नहीं उनको दुख होगा ।

सिद्धराज—मैंने उसको क़तल कर दिया ।

अब रानी को फिर चेत हुआ रे दुष्ट ! अत्याचारी ! राक्षस पिशाच ! दूर हो मेरी दृष्टि से । कुटिल ! तैने मेरे पति को मार दिया । छोटे कुमारों पर भी तुझे दया नहीं आई । तेने सबको तो नष्ट कर दिया । अब क्या चाहता है !

सिद्धराज—तुमको अपने महल की शोभा, राज की रानी, और अपने प्रेम का अधिष्ठान बनाना चाहता हूं ।

रानक—धिक्कार है तेरे हौसले पर !

आग लगे तेरे देश को व्यापै कष्ट कलेश ।
मैं जाने वाली नहीं, छोड़ पिया का देश ॥

आवाज़ आई । सिद्धराज ! ख़बरदार ! अब क्या करता है ? क्या तू नहीं देखता इस सती पर सत चढ़ा हुआ है ! सूरत सकल से सतका नूर बरस रहा है ! इसके श्राप से बच ! वरन् जिस प्रकार सती ने दक्ष प्रजापति के यज्ञ का विध्वंस कर दिया था वही तेरी भी दशा होगी । रानकदेवी तू पृथ्वी की जीव नहीं है, तू स्वर्ग की देवी है । इस अज्ञानी को श्राप मत दीजियो !

सिद्धराज ने देखा उसकी माता मैनलदेवी सामने खड़ी है । हाय माता ! तू मुझे कहीं चैन न लेने देगी !

मैनल—मैं ढाल बन कर तेरी रक्षा करती रहती हूं । पाप कर्म से बचाती रहती हूँ । तू अपने अवगुणों को नहीं छोड़ता । यह अबला अब संसारी नहीं है यह स्वर्ग की देवी है । इसे कोई बात

न कह और नहीं इसे अब छेड़ तेरा भला नहीं है।

रानक—भाई तू कौन है ?

मैनल—मैं इसकी माता हूं।

रानक—अफ़सोस ! तू तो भली प्रतीत होती है। यह तेरी कोख से कैसे पैदा हुआ? सोनेके घड़े से विष हलाहल कैसे निकला?

मैनल—यह कर्म की गति है और कुछ नहीं।

रानक—यह मुझसे अश्लील बातें करके मेरे चित्त को और दुखा रहा है। मैं इसे क्या कहूं। यह अपने दुष्कर्मों का महा दण्ड भोगेगा। इसके शुभ कर्मों ने इसे शक्तिशाली राजा बनाया पर इसके बाद पाटन देश में इसके वंश का एक बालक भी जीवित न रहेगा। जिस प्रकार इसने मुझे निःसन्तान किया है इसका नाम लेने वाला संसार में कोई न रहेगा। और सदा इसको सब बुरा कहते रहेंगे और यह आप मारा जायगा।

मैनल—आह ! तेने अन्त को श्राप दे ही दिया। कर्म की गति को कौन टाल सकता है ?

रानक—भाई गुरु एक होता है, ईश्वर एक होता है, इष्ट एक होता है, मालिक एक होता है, पति एक होता है जिस गुरु ने जिस व्यक्ति को अध्यात्मिक संस्कार दिया वही उस व्यक्ति का सच्चा गुरु है। जो दूसरा गुरु करता है या कई गुरु धारण करता है, वह पतित और संस्कार भ्रष्ट है उसको कभी भी इस जीवन में गुरु का साक्षात्कार न होगा। जो एक ईश्वर को छोड़कर किसी देवी देवता का इष्ट धारण करता है वह पापी है पतित है। नीच है और भ्रष्ट है। उसकी सद्गति कभी न होगी। जो नारि एक पति के आश्रित नहीं रहती वह व्यभिचारिणी तथा कुल की कलंक और वैश्या है उसे न लोक का सुख मिलेगा न परलोक का।

पतिव्रता के एक है व्यभिचारिन के दोय।
पतिव्रता व्यभिचारिनी कहो क्यों मेला होय।

पतिव्रता पति को भजे पति भज धर विश्वास।
आन दिशा चितवे नहीं सदा जो पीय की आस।
पतिव्रता मैली भली गले कांच की पोत।
सब सखियन में यों दिपे ज्यों रवि शशि को ज्योति।

मैनल—सत्य है पदमिनी सत्य है!

रानक—आज कल के शिष्य कहते हैं हम कई गुरु धारण करेंगे। गुरु मुख उसका नाम है जिसने गुरु को मुख्य मान लिया। अब कौन गुरु हो सकता है! दत्तात्रेय ऋषि के उदाहरण पर न जाओ। वह इस जगतही को गुरु रूप मानते थे। उनको सब में गुरुका रूप दृष्टिगोचर होता था। कैसे सम्भव है कि एक व्यक्ति के चित्त में यदि प्रथम गुरु की मूर्ति स्थापित हो गई तो उसे छोड़कर वह दूसरे का ध्यान करेगा। जो स्त्रियां बार २ विवाह करती हैं वह धार्मिक कर्म करने के योग्य नहीं समझी जातीं। मैं राखंगार की हूं। वही मेरे पति, परमेश्वर, गुरु और सर्वस्व हैं। इस अज्ञानी पापी को समझा दे अपने तुच्छ विचार का त्याग करदे और अब मुझे अधिक न सतावे। मैं जीवित नहीं हूं मृतक हूँ। यदि मुझे तनिक भी छेड़ेगा तो अपने आपको मरा हुआ समझले।

सिद्धराज—चित्त में भयभीत हो गया। कम्पायमान हो गया। रानक के बचनों में कुछ ऐसा प्रभाव था कि उसकी वाणी सदा के लिये मूक, अवाक हो गई।

मैनल बोली—सिद्धराज! सुनते हो यह सती क्या कह रही है

वह चुपचाप हो गया। तब रानी ने रानक से कहा। तेरी क्या आज्ञा है?

रानक—पति के साथ भस्म हो जाने दो!

मैनल—और कुछ?

रानक—और कुछ नहीं।

मैनल—देवी तू सच्ची सती है! इस उपाधि के मूल कारण तेरे

भानजे हैं। उन्होंने लोभ के वश तुझे यह दिन दिखाये।

रानक—यह कर्मगति है जो जैसा करेगा वैसा भोगेगा। मेरी दृष्टि केवल राखंगार की ओर है। मैं किसी को अब बुरा भला नहीं कहना चाहती।

मैनल—सिपाहियो! वेशल देशल को सेठ धर्मचन्द सहित बन्दी बनालो?

सिद्धराज—नहीं माता नहीं। इस कार्य के बदले मैं इनको इनाम दूंगा।

मैनल—पुत्र! यदि तू इस समय मेरा तनिक भी विरोध करता है तो देख यह कटार अभी खून पीने को तैयार है। जिन पिशाचों ने अपने अन्नदाता के साथ छल कपट किया। पिता से अधिक सनेही स्वामी को धोखा दिया उनसे तू सहानभूति की कैसे आशा कर सकता है। तुमको भी धोखा देंगे।

सिद्धराज—चुप हो रहा। वेशल देशल बन्दी हो आये। धर्मचन्द भी पकड़ा गया।

मैनल—क्यों बेईमानो! तुम क्यों निरपराधियोंके विनाश के कारण बने?

वेशल—कांपता हुआ, माई! प्राणों की रक्षा, पाप बनगया देशल तू क्यों रानी से कुछ विनय नहीं करता!

देशल—तुम खुद कह रहे हो।

मैनल—सिपाहियो! मेरे समीप इन तीनों का बध करो? न हो बांस न बजे बांसुरी? खस कम जहां पाक।

तीनों दोषी रानक के समीप मारे गये।

मैनलदेवी ने राखंगार के दीवान को बुलाकर समझाया। जब तक कोई राखंगार का हितू न मिले तुम सिद्धराज के नाम से राज करो। इसके पश्चात् चाहे यह देश पाटन देश के अधिकार में रहे पर किसी अधिकारी को पद दलिल न किया जायगा। तुम

उदासीन असावधान रहे हो। इस दृष्टि से रांखङ्गार के प्रति अपराधी और दोषी हो। पर सुहृद, हितैषी और नमक हलाल हो! इस कारण तुम्हारा अपराध क्षमा किया जाता है! जाओ नगर का प्रबन्ध करो! किसी प्रकार का ऊधम न मचने पावे।

सब लोग इस बुद्धिमान नारी के विवेक विचार को देख कर चकित रह गये! सिद्धराज को भी उस समय कुछ कहते सुनते न बन पड़ा!

बीसवां अध्याय

अन्तिम परिणाम

"अन्जाम जो अच्छा हो तो अच्छे हैं सभी काम"

मैनलदेवी ने विलाप करती हुई रानक देवी के आंसू अपने अंचल से पोंछे। उसका हाथ पकड़ लिया। पुत्री! जो होने को था होगया। भाग्य के लिखे पर किसी का बस नहीं। मनुष्य देवताओं के हाथ की कठपुतलियां बने हुये हैं। वह जो चाहते हैं नाच नचाते हैं तू धैर्य धर और स्वेच्छा पूर्वक अपने पति परायण के धर्म को पालन कर अब कोई व्यक्ति तेरे कार्य में बाधा न डालेगा।

समूह का समूह मनुष्यों का रानकदेवी के पीछे पीछे राखङ्गार के शव के निकट आया मैनलदेवी के सदाचार ने शत्रुओं को भी उसी क्षण हितैषी बना दिया। रानक पति के शव पर पछाड़ खागई और उसके चरणों को पकड़ कर विलाप करने लगी।

चल बसे तुम मैं हुई राम से परेशां हाय हाय!
इस मरज़ का हो नहीं सकता दरमा हाय हाय!
सोज़ दिलसे चश्म पुरनम से है जारी अश्क खून।
होगये हैं दोनों इकजा वर्क बारां हाय हाय!
सर्द महरी से सितमगर हसरतों का खूँ हुआ।
अब नहीं दिलमें मेरे जीने का अरमां हाय हाय!

चीख उठी सचमुच क़यामत आ गई मेरे लिये।
हो नहीं सकती मेरी मुश्किल यह आसां हाय हाय!
पांव के तिनके को भी पामाल मैं करती न थी।
क्यों सितमगर होगया तू जां का ख्वाहां हाय२।
बनगये बेगाने अपने आज खवेस व अक़रबा।
दोस्त तक इक दम हुये हैं दुशमनेजां हाय हाय!
आके फूंका ख़िरमने होशो ख़िरद को किस तरह।
गिरपड़ी आफ़त की उस पर बर्क सौजां हाय२।
वाय हसरत जलगये आतिश से ग़मके बर्गोबार।
आज बीराना हुआ अपना गुलिस्तां हाय हाय!
बेबफ़ाई की हुई हद बावफ़ा कोई नहीं।
क्या भरोसा अब करे इन्सां का इन्सां हाय हाय।

इसी बीच चिता तैयार कर दी गई। रानक देवी उठ खड़ी हुई। लोगों ने लाश को उठा कर चिता पर रख दी। रानक ने पति के शीश को गोद में रख लिया। मेनल देवी ने उसके सुहाग के डिब्बे को महल से मंगा दिया। सती ने इस सिंधोरे को हाथ में ले लिया।

दीवान आया। चिता की परिक्रमा की फिर कर जोड़ कर समीप आया। अफ़सोस माता! हम मर नहीं गये! नमक के हक़ को अदा नहीं कर सके और तुझ को इस दशा में देखते हैं। फिर सैना पति ने भी चिता की परिक्रमा की। रानक ने उससे कहा। पुत्र! मेरी गोद को निरदई ने प्रथम ही खाली कर दिया। तुम आज धर्म पुत्र बनो। अपने पिता के शव का दग्ध संस्कार करो। तुम्हारे सिवाय अब अन्य किसको कहूं।

सैनापति ने अग्नि जलाई। फिर पांच बार स्तुति करके परिक्रमा की। पींठ की ओर से आग लगा दी। चिता भभक उठी।

घी और सामग्री से भीगी हुई चन्दन की समधायें मशाल की तरह जलने लगीं। रानक ने हाथ उठाया। यह शब्द सबने उसकी वाणी से उस समय सुने।

जन्म जन्म होउँ पति परायण जन्म पति की सेवा।
जन्म जन्म हो भक्ति पति की और न पूजूं कोई देवा।
पति मेरे पुरषोत्तम प्यारे जान प्राण से पति प्यारे।
मेरे मन में पति की मूरति पति आंखों के मेरे तारे।
पति पर तन मन सब मैं वारूं पति के नाम से काम मेरा।
मैं हूँ सती सीता की बेटी पति राम विश्राम मेरा।
अग्नि के रथ पर बैठी हूँ और पति के देश को जाती हूँ।
पति के रंग रँगी है प्रेमिन जग को आग लगाती हूँ।
देह पति की गेह पति का नेह पति की मन भाई।
आरति करने पति की निस दिन आरति का सामाँ लाई।

अग्नि की ज्वाला प्रचंड हुई। प्रचंड अग्नि ने अपना उग्र रूप धारण किया। हजारों ज्वालाओं की जिभ्या से वह रानकदेवी को उसी समान चाटने लगीं जिस प्रकार गऊ अपने बच्छ को चाटती है। थोड़े समय में रानक देखते २ अग्नि के रूप में चमक उठी। वह कुन्दन के समान दमकने लगी। शरीर के अन्दर गुप्त आत्मिक तेज ने फिर दुबारा तेज का वस्त्र धारण कर लिया। निज रूप अपने निज रूप में लीन हो गया। और मिट्टी का शरीर जल भुन कर भस्मीभूत होगया। चारों ओर से धन्य! धन्य! और जै जै कार की धुन गूंजने लगी।

यह रानक देवी के सांसारिक जीवन का परिणाम हुआ। धन्य हैं वह स्त्रियां! जिनके जीवन का अन्तिम ध्येय इस समान होता है! उनका जीवन संसार में सुफल हो जाता है और वह न केवल दोनों कुल को उज्ज्वल करती हैं बल्कि लोक परलोक को सहज में

सुधार लेती हैं। पुंजी का आशीर्वाद अक्षरशः उसके हेतु उपकारक सिद्ध हुआ। गुजरात की नारियां उसका नाम आज भी मान व प्रतिष्ठा और आदर सहित लेती हैं।

राखंगार के महल का नाम व निशान तक नहीं है! सिद्धराज ने इस हृदय भेदक घटना से प्रभावित होकर चिता के स्थान पर पक्की इमारत उसकी यादगार में बनवादी थी। वह अब तक चली आती है और लाखों हिन्दू नर नारियां उसको अपनी श्रद्धांजली भेंट करते हैं। और पूजा करके अपनी मनोकामनाओं के पूर्ण होने की प्रार्थना करते हैं।

यह वेदान्त, अद्वैतवाद और एकत्ववाद की यथार्थ शिक्षा है जो रानक देवी अपने अमर जीवन से हमको सिखाती है। गुरु आशीर्वाद दें कि हम भी उसी के अनुरूप गुरु परायण बनें!

एक नाम को जान कर दूजा दियो बहाय।
जप तप तीरथ वृत नहीं सत गुरु चरन समाय॥
सब आये उस एक में डाल पात फल फूल।
अब कहो पाछे क्या रहा गहि पकड़ा जब मूल॥
मैं अबला पीउ पीउ करूं गिरगुण मेरा पीउ।
परम सनेही गुरु बिन और न देखूं जीव॥

॥ चौथा भाग समाप्त ॥

परम पुरुष पूरन धनी सतगुरु के चरणों में प्रार्थनाः—

आजा रँगीले यार! तेरी छवि चित में समा गई।
अरे आजा रंगीले यार! तेरी छवि चित में समागई॥
१—दुरमति त्यागूं चरनों लागूं, जग के मोह माया से भागूं॥
बांकी अदा मन भा गई।
अरे आजा रँगीले यार! तेरी छवि चित में समा गई॥

२—सब को छोड़ा नाता तोड़ा। तुझ से नेह का रिश्ता जोड़ा।
तेरी शरन में आ गई॥
अरे आजा रँगीले यार! तेरी छवि चित में समा गई।

३—नहीं संसारी न मैं व्यभिचारी, तुझ से होगई मेरी यारी॥
भक्ति भाव फल पागई।
अरे आजा रँगीले यार! तेरी छवि चित में समा गई॥

४—गुरु हैं दाता, गुरु पितु माता। गुरु हैं सम्बन्धी हितु भ्राता,
गुरु के रंग रंगा गई।
अरे आजा रँगीले यार! तेरी छवि चित में समा गई।

५—जगदाधारी जग हितकारी। राधास्वामी चरन शरन बलिहारी।
माया और मैं ना गई।
अरे आजा रँगीले यार! तेरी छवि चित में समा गई॥

* समाप्त *